# इकाई 1 किसान जीवन के परिप्रेक्ष्य में गोदान

**इकाई की रूपरेखा**


1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 गोदान उपन्यास की कथायोजना
1.3 गोदान में भारतीय किसानों की वेदना की अभिव्यक्ति
1.4 गोदान के पाठक
1.5 गोदान में गाय का महत्व
1.6 किसानों का आर्थिक-सामाजिक शोषण
1.7 होरी का स्थितियों से समझौता
1.8 सारांश
1.9 प्रश्न/अभ्यास


## 1.0 उद्देश्य

हिंदी उपन्यास एवं कहानी पाठ्यक्रम की यह पहली इकाई है। इसमें प्रेमचंद के रूप में आप एक सुपरिचित कथाकार का अध्ययन करने जा रहे है। हिंदी में जब भी उपन्यास लेखकों की चर्चा की जाती है, तब प्रेमचंद का नाम सबसे पहले लिया जाता है। एक तो इसलिए कि प्रेमचंद हिंदी के पहले गंभीर उपन्यास लेखक हैं और दूसरे उनके उपन्यास आज भी श्रेष्ठ एवं प्रासंगिक बने हुए है। इस इकाई के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाएगा कि 'गोदान' (1936ई.) की चर्चा किए बिना हिंदी उपन्यास साहित्य पर सार्थक चर्चा नहीं हो सकती। इस इकाई में 'किसान-जीवन' को ध्यान में रखते हुए हम 'गोदान' की विषय वस्तु का विश्लेषण करेंगे। इसे पढ़ने के बाद आप -

- भारतीय किसानों का आर्थिक-सामाजिक शोषण करने वाली दमनकारी ज़मींदारी व्यवस्था से परिचित हो सकेंगे,
- जातिव्यवस्था और शोषण प्रक्रिया के अंतः संबंधों को जान सकेंगे,
- 'गोदान' में गाय के महत्व और धर्म के दबाव को झेलते किसान की मनःस्थिति को समझ सकेंगे,
- होरी का शोषण व्यवस्था और शोषकों के विरोध में विद्रोह न करने के कारणों को भी जान सकेंगे,
- पूँजीवाद के आगमन के कारण बदलते आर्थिक-सामाजिक संबंधों का आप विवेचन कर सकेंगे।

गोदान का अध्ययन-विश्लेषण इन्हीं प्रश्नों और बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए करने का हमने प्रयास किया है, इस पाठ का ध्यानपूर्वक अध्ययन करे।

## 1.1 प्रस्तावना

जून, 1903 में प्रेमचंद ने "ऑलिवर क्रामवेल" की जीवनी पर एक लेख लिखा। इसमें उन्होंने एक रचनात्मक निरीक्षण करते हुए लिखा है - "ऐसा बहुत कम संयोग हुआ है कि एक शांति-प्रेमी किसान के रोज़ाना हालात विस्तार के साथ लिखे हुए मिल सकते हों

या उनमें किस्सों की-सी दिलचस्पी और अजब-अनोखी बातें पायी जाती हों।" (विविध प्रसंग, भाग-1, पृ.37 सं.अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962) यह प्रेमचंद का आरंभिक लेख है। इस लेख में प्रेमचंद की रचनात्मक चुनौती और भीतरी लालसा का पता चलता है कि आखिर किसान का दैनिक जीवन किस्से-कहानियों का विषय क्यों नहीं हो सकता? प्रेमचंद ने इस संभावना की तलाश की। किसान-जीवन का बारीकी से मनन किया। उसके जीवन के करुण-मनोहर पक्षों को देखा-परखा। इस क्रम में उन्होंने सर्वप्रथम "पंच परमेश्वर" (1915) कहानी लिखी। बाद में "सवा सेर गेहूं", "दो बैलों की कथा", "बलिदान", "मुक्तिमार्ग", "पूस की रात" आदि अनेक कहानियाँ तथा "प्रेमाश्रम", "कर्मभूमि" आदि उपन्यास लिखे। इतने सारे लेखन के बावजूद प्रेमचंद की रचनात्मकता संतुष्ट नहीं हुई। उनको लगता रहा कि अभी "शांति-प्रेमी किसान के रोज़ाना हालात विस्तार के साथ" चित्रित नहीं हो पाए हैं। अतः वे किसान जीवन के मनन एवं किसान पात्रों की तलाश में लगे रहे। अंततः "गोदान" में होरी-धनिया को उपस्थित कर उन्होंने अपने उस स्वप्न को साकार किया, जिसकी अनकही चुनौती 1903 ई. से उनके मन-मस्तिष्क में सजीव थी। निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि "गोदान" प्रेमचंद की आकस्मिक रचना नहीं है, वरन् उनके जीवन-भर के सर्जनात्मक प्रयासों का निष्कर्ष देने वाली रचना है।

## 1.2 "गोदान" उपन्यास की कथा-योजना

"गोदान" में प्रेमचंद ने होरी-धनिया के जीवन के माध्यम से उत्तर भारत के "शांति-प्रेमी किसान" की कष्टप्रद ज़िंदगी का चित्रण किया है। इस क्रम में उन्होंने संपूर्ण गाँव-जीवन के आपसी संबंधों का ताना-बाना प्रस्तुत किया है, परंतु "गोदान" सिर्फ ग्राम-कथा नहीं है। गाँव की कथा के साथ-साथ इसमें शहरी जीवन की कथा भी चलती रहती है जिसमें ज़मींदार राय साहब अमरपाल सिंह, मिर्ज़ा खुर्शेद, मिस मालती, मि.खन्ना, ओंकारनाथ, मि.मेहता आदि अनेक शहरी पात्र भी आते हैं। ये दोनों कथाएँ "गोदान" में अलग-अलग होते हुए भी साथ-साथ चलती हैं।

प्रेमचंद साहित्य के अनेक आलोचकों का मत है कि "गोदान" में प्रेमचंद को सिर्फ होरी-धनिया के गाँव की कहानी कहनी चाहिए थी। उपन्यास में शहर के पात्रों को डालकर, शहरी जीवन का वर्णन करके उन्होंने उपन्यास की कलात्मकता को नुकसान पहुँचाया है। इससे उपन्यास का कथानक ढीला-ढाला हो गया है और उपन्यास का कलात्मक संयोजन बिगड़ गया है। फिर, ग्राम-कथा तो प्रेमचंद के अनुभव-जगत् से पुष्ट होने के कारण यथार्थवादी कथा है, जबकि शहर की कथा में वैसी प्रामाणिकता का अभाव है। इसमें अनावश्यक भाषण, वार्तालाप, चर्चा-परिचर्चा का सहारा लेकर शहरी जीवन का सतही परिचय दिया गया है। प्रेमचंद को संपूर्ण समाज के चित्रण का मोह त्याग कर ग्रामीण जीवन की कहानी कहनी चाहिए थी। इन्हीं बातों को लेकर जैनेन्द्र कुमार ने "गोदान" की समीक्षा करते हुए अपने लेख का शीर्षक दिया "प्रेमचंद का गोदान यदि मैं लिखता।" (प्रेमचंद कृती व्यक्तित्व, जैनेन्द्र कुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली)

इसी तरह, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने "गोदान" की तुलना एक ऐसे मकान से की है जिसके दो अलग-अलग खण्डों में दो परिवारों के रूप में गाँव तथा शहर रहते हों और जो कभी-कभी एक-दूसरे से मिल लेते हों। (आधुनिक साहित्य, पृ.174, ले.नंददुलारे वाजपेयी, भारती भण्डार, इलाहाबाद, संवत 2031 वि.) कहने का तात्पर्य यह है कि "गोदान" में आई हुई ग्राम-कथा तो ठीक है, परंतु उसमें आई हुई शहर की कथा

अप्रासंगिक है। इससे ''गोदान'' की कलात्मकता में बाधा पहुँचती है। ''गोदान'' की कथा की संरचना का विश्लेषण करने के लिए इन बातों की परीक्षा करने की आवश्यकता है। सबसे पहले हम यह देखें कि प्रेमचंद क्या मानते हुए प्रतीत होते हैं। ये मत प्रेमचंद की मृत्यु के बाद प्रकट हुए हैं, इसलिए प्रेमचंद की इस संबंध में क्या राय हो सकती थी। इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। फिर भी, उनकी रचनाओं का विश्लेषण करके हम कुछ-कुछ अनुमान कर सकते हैं कि उन्होंने ऐसा क्यों किया।

प्रेमचंद मानते हैं कि भारतीय गाँव समाज की स्वायत्त इकाई नहीं है, वरन् उसका संबंध सूत्र शहर, राष्ट्र और ब्रिटिश साम्राज्य से जुड़ा है। इसलिए संपूर्ण ब्रिटिश भारत के परिप्रेक्ष्य में ही गाँव-जीवन को देखा-समझा जा सकता है। ''गोदान'' में ''सेमरी और बेलारी दोनों अवध प्रांत के गाँव'' हैं। ''दोनों गाँवों में केवल पाँच मील'' का अंतर है। होरी बेलारी में रहता है और उसके ज़मींदार राय साहब अमरपाल सिंह सेमरी में विराजते हैं। उपन्यास ज्यों ही बेलारी से निकल कर सेमरी में पहुँचता है, एकाएक उपन्यास में शहर आ जाता है। आज़ादी से पूर्व ज़मींदार और ज़मींदारी प्रथा के संदर्भ के बिना किसान-जीवन की परिकल्पना करना अयथार्थपूर्ण लगता है। ज़मींदार की आमदनी गाँव से होती है, परंतु उसका उपभोग वह शहर में करता है। ज़मींदार की प्रकृति को स्पष्ट किए बिना किसान-चरित्र का उद्‌घाटन संभव नहीं है। स्वाभाविक रूप से ज़मींदार के शहरी मित्र भी उसके साथ खिंचे चले आए हैं।

''गोदान'' में होरी राय साहब से मिलता है। ''यह इसी मिलते-जुलते रहने की परसाद है कि अब तक जान बची हुई है, नहीं कहीं पता न लगता कि किधर गए। गाँव में इतने आदमी तो हैं, किस पर बेदखली नहीं आयी, किस पर कुड़की नहीं आयी। जब दूसरों के पाँवों-तले अपनी गर्दन दबी हुई है, तो उन पाँवों को सहलाने में ही कुशल है।''(गोदान, पृ.7) उनके संबंधों का वर्णन तो लेखक को करना ही पड़ेगा। राय साहब के घर पर उत्सव है, उसमें होरी को बुलाया गया है। उस दिन के नाटक 'धनुष-यज्ञ' में उसे राजा जनक का माली बनना है। इस उत्सव के लिए होरी को पाँच रुपए नज़राना देना है। इससे होरी चिंतित हो गया है। इस उत्सव में शहर के धनी-मानी लोग सम्मिलित होते हैं। उनकी आपसी बातचीत से शहरी जीवन अभिव्यक्त होता है।

होरी के घर पर दमड़ी बसोर आता है तथा बाँस खरीदता है। होरी के मन में बेईमानी आती है। भाव-ताव में कमी-बेसी करके बीस रुपया सैंकड़ा की दर तय होती है, शर्त यह है कि दमड़ी होरी के भाइयों को पन्द्रह रुपया सैंकड़ा बताएगा। इस संदर्भ में जो विवाद खड़ा होता है आगे चलकर वह होरी की गाय को ज़हर खिलाने तक चलता है। यहाँ दमड़ी कहता है - ''ऐसे क्या, इससे अच्छे बाँस मिल जाते हैं दस रुपए पर, हाँ, दस कोस और पच्छिम चले जाओ। मोल बाँस का नहीं है, शहर के नगीच होने का है।''(गोदान, पृ.26)

इसी तरह, गोबर गाँव से भागकर शहर में आ जाता है और मिर्जा खुर्शेद के यहाँ 15 रुपए वेतन पर नौकर हो जाता है। होरी के जीवन पर आए संकटों में से एक गोबर के घर से भाग जाने से भी आता है। यही गोबर जब वापस गाँव आता है तो उसके व्यक्तित्व में हुए परिवर्तन को सभी पात्र लक्षित करते हैं -- ''उसने अंग्रेज़ी फैशन के बाल कटवा लिए हैं, महीन धोती और पम्प शू पहनता है। एक लाल ऊनी चादर खरीद ली और पान-सिगरेट का शौकीन हो गया है। सभाओं में आने-जाने से उसे कुछ-कुछ राजनीतिक ज्ञान भी हो चला है। राष्ट्र और वर्ग का अर्थ समझने लगा है। सामाजिक रूढ़ियों की प्रतिष्ठा और लोक-निन्दा का भय अब उसमें बहुत कम रह गया है।'' (''गोदान'', पृ.168)

''गोदान'' के किसान शहर में शक्कर मिल खुल जाने की बातें करते हैं। राय साहब के मित्र खन्ना यह मिल खोलते हैं, जिसमें आगे चलकर गोबर कुछ दिन मज़दूरी करता है। इस मिल के लिए खड़ी ऊख खरीदी जाती है -- ''सारा गाँव खड़ी ऊख बेचने को तैयार हो गया है।'' और जब ऊख तैयार हो गई, किसानों ने उसे मिल में पहुँचा दिया तब मुनीम से मिलकर गाँव के महाजन झिंगुरी सिंह ने अपने रुपए वसूल कर लिए, क्योंकि ''जिस खन्ना बाबू की मिल है, उन्हीं खन्ना बाबू की महाजनी कोठी भी है। दोनों एक हैं।'' (''गोदान'', पृ.153) शहर और गाँव का यह आर्थिक रिश्ता गाँव में मौजूद है। प्रेमचंद इसे दिखाते हैं।

मेहता और मालती घूमते-घामते एक दिन बेलारी पहुँच जाते हैं और एक दिन होरी के घर पर ठहरते हैं। मेहता किसानों से खेती के बारे में बातचीत करते हैं तथा मालती देहाती औरतों के स्वास्थ्य की जाँच करती है। मिर्ज़ा खुर्शेद शिकार पार्टी के दौरान सारे गाँव को दावत खिलाते हैं। उपन्यास में पुलिस आती है तथा किसी-न-किसी बहाने सारे गाँव को डरा-धमकाकर शहर चली जाती है। फिर, होरी के गाँव में रायसाहब का कारिन्दा नोखेराम रहता है। अंग्रेज़ सरकार का पटवारी पटेश्वरी का निवास भी बेलारी में है। होरी के शोषण में इन दोनों की निर्णायक भूमिका रहती है।

''गोदान'' के अंतिम पृष्ठों में रामसेवक भारतीय किसान के राजनीतिक-आर्थिक संबंधों को विश्लेषित करते हुए कहता है, ''यहाँ तो जो किसान है, वह सबका नरम चारा है। पटवारी का नजराना और दस्तूरी न दे तो गाँव में रहना मुश्किल। ज़मींदार के चपरासी और कारिन्दों के पेट न भरे तो निबाह न हो। थानेदार और कानिसिटिबिल तो जैसे आपके दामाद हैं। जब उनका दौरा गाँव में हो जाय, किसानों का धरम है, वह उनका आदर-सत्कार करें, नजर-नयाज दें, नहीं एक रिपोर्ट में गाँव का गाँव बँध जाय। कभी कानूनगो आते हैं, कभी तहसीलदार, कभी डिप्टी, कभी जण्ट, कभी कलक्टर, कभी कमिसनर। किसान को उनके सामने हाथ बाँधे हाजिर रहना चाहिए। उनके लिए रसद-चारे, अंडे-मुर्गी, दूध-घी का इन्तजाम करना चाहिए। तुम्हारे सिर भी तो वही बीत रही है महाराज! एक-न-एक हाकिम रोज नए-नए बढ़ते जाते हैं। एक डाक्टर कुओं में दवाई डालने के लिए आने लगा है। एक दूसरा डाक्टर कभी-कभी आकर ढोरों को देखता है, लड़कों का इम्तहान लेने वाला इंसपिट्टर है, न जाने किस-किस महकमे के अफसर हैं, नहर के अलग; जंगल के अलग, ताड़ी-सराब के अलग, गाँव-सुधार के अलग, खेती विभाग के अलग। कहाँ तक गिनाऊं? पादड़ी आ जाता है तो उसे भी रसद देना पड़ता है, नहीं शिकायत कर दे।'' (''गोदान'', पृ.292) ये सारे अफसर शहर से गाँव आते हैं। इसलिए शहरी जीवन की प्रकृति को समझे बिना गाँव-जीवन की कथा के अंतःसंबंधों को समझ पाना मुश्किल है। संभवतः यही कारण है कि प्रेमचंद ने सिर्फ गाँव की कथा ही नहीं लिखी है वरन् गाँव के भाग्य को निर्धारित करने वाले शहर की कथा भी लिखी। यदि प्रेमचंद सिर्फ होरी-धनिया की ही कहानी कहते तो इससे न केवल भारतीय समाज की अधूरी तस्वीर पेश करते वरन् होरी-धनिया की भी सतही तस्वीर पेश करते। तब हम होरी की करूण कथा की गहराई का अंदाजा नहीं लगा पाते।

## 1.3 'गोदान ' में भारतीय किसानों की वेदना की अभिव्यक्ति

प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं में संपूर्ण भारतवर्ष के किसानों के दुःख-दर्द का चित्रण नहीं किया है; उन्होंने सिर्फ उत्तर भारत में ज़मींदारी-प्रथा के भीतर रहने वाले किसानों का वर्णन किया है। ब्रिटिश भारत में अंग्रेज़ों ने कुछ हिस्सों में रैयतवारी और कुछ हिस्सों में इस्तमवारी भूमि-व्यवस्था लागू कर रखी थी। रैयतवारी व्यवस्था में किसान अपनी लगान

सीधे अंग्रेज़ सरकार को दे देता है। इस्तमवारी व्यवस्था में लगान वसूलने का काम बिचौलिए वर्ग के रूप में ज़मींदार वसूल करते थे तथा ज़मींदार ही अंग्रेज़ों के पास लगान जमा करवाते थे। देशी रियासतों में भूमि कर की व्यवस्था स्थानीय सामंत किया करते थे, जो अपने जागीरदारों एवं अन्य लोगों के माध्यम से लगान वसूल करते थे। उन्होंने न तो देशी रियासतों के भीतर रहने वाले किसानों का वर्णन किया है और न रैयतवारी व्यवस्था में रहने वाले किसानों को उपस्थित किया है। उनकी आरंभिक रचनाओं, विशेषकर ''प्रेमाश्रय'' में तो रैयतवारी व्यवस्था का समर्थन किया गया है। भौगोलिक दृष्टि से भी उन्होंने लखनऊ, फैजाबाद, बनारस, कानपुर, गोरखपुर, प्रतापगढ़ के आसपास के किसानों को चित्रित किया है। इसलिए होरी भौगोलिक दृष्टि से संपूर्ण भारत के किसानों का प्रतिनिधि पात्र नहीं है। वह तो सिर्फ उत्तर भारत की ज़मींदारी-व्यवस्था में रहने वाले किसानों के दुःख-दर्द को वहन करता है।

''गोदान'' में प्रेमचंद ने मोटे तौर से तीन तरह के किसानों का वर्णन किया है। बेलारी में कुछ ऐसे लोग रहते हैं जिनके पास अपनी ज़मीन है, वे लगान देते हैं, परंतु स्वयं उस पर खेती नहीं करते। वे अपने खेत में खेत-मज़दूरों से काम करवाते हैं। ''गोदान'' के सभी धनी किसान इस श्रेणी में आते हैं। पं.दातादीन, झिंगुरी सिंह, पटेश्वरी आदि कोई खेत में जाकर काम करता हुआ नहीं दिखाई देता। प्रेमचंद इन्हें किसान नहीं मानते। इसलिए इस वर्ग के पक्ष में वे कुछ नहीं लिखते। ये लोग ज़मींदार या कारिन्दो से मिलकर ग़रीब किसानों के शोषण में सहायक की भूमिका निभाते हैं। धनिया इन्हें ''हत्यारा'' कहती है। गाँव में कुछ ऐसे लोग भी रहते हैं जिनके पास अपनी ज़मीन नहीं होती। ये दूसरों की ज़मीन पर खेती का काम करते हैं। दलित जातियों से संबंधित ऐसे लोग खेत-मज़दूरों की श्रेणी में आते हैं। प्रेमचंद ने बहुत सहानुभूति से इन पात्रों को उपस्थित किया है। हरखू, सिलिया और उनका परिवार इसी श्रेणी में आता है। प्रेमचंद इस वर्ग को भी किसान नहीं मानते। किसान इस वर्ग में मिल रहे हैं, उनकी ज़मीन छीनी जा रही है, इसे प्रेमचंद ने देखा है, दिखाया है, चिंता की है। परंतु वे किसान से मज़दूर बन जाने में किसान की हेठी समझते हैं। इसलिए इस प्रक्रिया का समर्थन नहीं करते। इस वर्ग की पीड़ाओं का भी विस्तृत वर्णन प्रेमचंद नहीं करते। इनके दुःख-दर्द की ओर इशारा करके वे आगे बढ़ जाते हैं।

प्रेमचंद की दृष्टि में किसान वह है जिसके पास अपनी ज़मीन है और जिसपर वह स्वयं खेती करता है। वही ज़मींदार को लगान देता है। होरी के पास पाँच बीघा मौरूसी ज़मीन है। इस वर्ग को प्रेमचंद किसान मानते हैं। प्रेमचंद इसी वर्ग के पक्षधर लेखक हैं। ऐसे लोगों के शोषण-उत्पीड़न का वे विरोध करते हैं। अपनी इस ज़मीन को बचाए रखने के लिए यह वर्ग जो संघर्ष करता है, उस संघर्ष को लेखकीय सहानुभूति का बड़ा हिस्सा मिलता है। ''गोदान'' के अंतिम पृष्ठों में प्रेमचंद ने लिखा - ''हारे हुए महीप की भाँति उसने अपने को इन तीन बीघे के किले में बंद कर लिया था और उसे प्राणों की तरह बचा रहा था। फाके सहे, बदनाम हुआ, मजूरी की; पर किले को हाथ से न जाने दिया; मगर अब वह किला भी हाथ से निकला जाता था।.....कहीं से रुपए मिलने की आशा न थी। ज़मीन उसके हाथ से निकल जाएगी और उसके जीवन के बाकी दिन मजूरी करने में कटेंगे। भगवान की इच्छा।'' (''गोदान'', पृ.289)

प्रेमचंद किसान को किसान के रूप में देखना चाहते हैं। इसी वर्ग में रहते हुए इनकी दशा सुधारने की वकालत करते हैं। होरी इसी गरीब छोटी जोत वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। ऐसा किसान जिसके पास पाँच-छह बीघा ज़मीन है, बकाया लगान का बोझ है, न उतरने वाला ऋण है, अनेक सामाजिक-धार्मिक मान्यताओं से जकड़ा हुआ है, असंगठित

है, असहाय है और बस खेत-मज़दूर बनने ही वाला है। प्रेमचंद इसके पक्षधर हैं। अनेक कष्टों के बावजूद होरी की किसान बने रहने की इस जिद्दनुमा आकांक्षा को प्रेमचंद ने बहुत आदर से देखा है। यह एक किसान के अस्तित्व रक्षा का सवाल है। इस आकांक्षा के लिए होरी छोटी-मोटी बेईमानी भी करता है, यहाँ तक कि अंत में अपनी बेटी बेचने पर मजबूर हो जाता है। तब भी, वह लेखकीय सहानुभूति से वंचित नहीं होता। प्रेमचंद उसकी अनैतिकता में भी नैतिक गौरव देखते हैं और दिखाते हैं।

## 1.4 'गोदान' के पाठक

अब ''गोदान'' को इस रूप में देखना भी आपके लिए महत्वपूर्ण है कि उसका संभावित पाठक वर्ग कौन है? प्रेमचंद ने इसमें किसको संबोधित किया है? लेखक किसानों के दुःख-दर्द की करुण कहानी किसको सुनाना चाहता है? वैसे तो लिखी जाने के बाद कोई भी रचना लेखक से छूट कर न मालूम किस-किस पाठक समुदाय के पास पहुँच जाती है? इसका एहसास लेखक को नहीं रहता, न उसपर लेखक का कोई नियंत्रण रहता है। तब भी, किसी रचना के स्वरुप निर्धारण में उसके तात्कालिक पाठक की भूमिका होती है।

प्रेमचंद का ''गोदान'' किसानों को सम्बोधित रचना नहीं है। उन्होंने अपढ़ किसानों के बारे में लिखा है, परंतु उनके पढ़ने के लिए उन्होंने ''गोदान'' की रचना नहीं की। भले ही, आज का किसान उसे पढ़कर अपने पूर्वजों के बारे में जान सकता है। इसी तरह उन्होंने ज़मींदारों-ताल्लुकेदारों-अधिकारियों के लिए भी इसे नहीं लिखा। उनके हृदय-परिवर्तन की आशा लेखक को नहीं है। यदि ऐसा होता तो ''गोदान'' की वर्तमान रुप-सज्जा में बहुत परिवर्तन हो जाता। दरअसल यह मध्य वर्ग के शिक्षित पाठकों को सम्बोधित रचना है। इस वर्ग को किसान जीवन से परिचित करवाना तथा इसे किसानों के पक्ष में करना लेखक का उद्देश्य रहा है। इसलिए उन्होंने अपने किसान पात्रों को इस रुप में चित्रित किया है, जिससे पाठक को यह महसूस हो सके कि किसान भी आप-हम जैसे ही मनुष्य हैं। उनमें भी हर्ष, शोक, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा जैसे मानवीय भाव विद्यमान हैं। किसान किसी विचित्र लोक का विचित्र प्राणी नहीं है। परंतु वह मध्य वर्ग से कुछ मामलों में थोड़ा-सा अलग है। उनमें कुछ कमियाँ हैं तो कुछ अच्छाइयाँ भी हैं।

इस तरह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का साहित्य शिक्षित मध्य वर्ग को किसानों के पक्ष में करने के लिए लिखा गया है। उन्हें अपने गाँव की कहानी पढ़े-लिखे, देहात से अनभिज्ञ पाठक को सुनानी है। इसमें एक तरफ तो यह ध्यान रखा गया है कि पाठक के मानस पर गाँव का नक्शा उतर आए, जो न इतना अपरिचित ही हो कि पाठक उससे तादात्म्य ही न कर पाए और न इतना परिचित ही हो कि शहरी जीवन से अलग उसकी कोई पहचान ही न बन पाए। साथ ही यह नक्शा गाँव के गतिशील यथार्थ के करीब भी हो। (''प्रेमचंद और भारतीय किसान'', पृ.89 ले.डॉ.रामबक्ष, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1982)

इसी कारण प्रेमचंद ने कई बार गाँव एवं शहर के पात्रों को आपस में मिला दिया है। राय साहब की शिकार-पार्टी में मालती और जंगली युवती की तुलना कर दी, तंखा की किसान से होड़ करवा दी, जो मरे हुए हरिण को लेकर दौड़ा जा रहा था या कि धनुष-यज्ञ के पठान से होरी को भिड़ा दिया। मेहता-मालती को होरी-धनिया के घर भेजकर भी लेखक ने यही किया है। ये सामान्य से दिखाई पड़ने वाले प्रसंग उपन्यासकार ने इसी कारण प्रस्तुत किए हैं।

रचना के स्तर पर यहाँ प्रेमचंद को भाषिक समस्या से भी जूझना पड़ा है। कहना चाहिए कि हिंदी में इस तरह की भाषिक समस्या से प्रेमचंद को पहली बार जूझना पड़ा। बाद में और लेखकों ने भी ये समस्याएं लिखीं। यहाँ लेखक उन किसानों को लिखित भाषा में बाँधकर प्रस्तुत करता है जो स्वयं साक्षर नहीं है। अपढ़ किसानों की अभिव्यंजना के मूल भाव को बनाए रखते हुए उनकी भाषा को पठनीय बनाना प्रेमचंद के लिए बड़ी भारी चुनौती थी, जिसे प्रेमचंद ने बहुत कुशलतापूर्वक हल कर लिया। इस दृष्टि से होरी की भाषा में जबर्दस्त अभिव्यंजना-क्षमता विद्यमान है।

## 1.5 गोंदान में गाय का महत्व

किसान के अस्तित्व रक्षा की चिन्ता ''गोदान'' में सर्वाधिक मुखर रूप में दिखाई देती है। लेखक ज्यों ही गाँव-जीवन में प्रविष्ट होता है त्यों ही उसकी लेखनी में करुणा का संचार होने लगता है। उल्लास-उत्साह और उमंग का वातावरण ''गोदान'' में कम मिलता है। जहाँ भी ऐसा प्रसंग आता है वहाँ भावी अनिष्ट की आशंका कथा को विगलित करती रहती है। गरीबी, दुःख, दैन्य, पीड़ा, अन्याय, अत्याचार का वर्णन पढ़ते-पढ़ते हम थकने लगते हैं। जहाँ भी, जब भी दो पात्र आपस में दिल खोलकर बातें करते हुए आते हैं, वहाँ थोड़ी देर बाद कोई-न-कोई करुण प्रसंग उपस्थित हो जाता है। शहर का वर्णन करते हुए बेशक लेखक हास्य-व्यंग्य के प्रसंग ले आता है, थोड़ी देर के लिए लेखक आनंद में मग्न हो जाता है, मिर्जा-तंखा, मेहता-मालती की चर्चाओं में अन्य भाव-स्थितियाँ भी अभिव्यक्ति पा जाती हैं, तथापि मूल मनोभाव वहाँ भी करुणा का ही रहता है।

''गोदान'' की कथा के केंद्र में गाय की लालसा है। संपूर्ण उपन्यास में किसी न किसी रूप में गाय मौजूद रहती है। उपन्यास के आरंभ में प्रेमचंद लिखते हैं - ''हर एक गृहस्थ की भाँति होरी के मन में भी गऊ की लालसा चिरकाल से संचित चली आती थी। यही उसके जीवन का सबसे बड़ा स्वप्न, सबसे बड़ी साध थी। बैंक सूद से चैन करने या ज़मीन खरीदने या महल बनवाने की विशाल आकांक्षाएँ उसके नन्हे-से हृदय में कैसे समातीं।'' (''गोदान'', पृ.8) इस उद्धरण से स्पष्ट है कि होरी का अब तक का जीवन ''इस अपूर्ण आकांक्षा'' के साथ चलता रहा है। अनेक संघर्षों, अभावों, षडयंत्रों, कुचक्रों के बीच भी होरी गाय रखने की इच्छा पाले रखता है। ज्यों ही उसे अवसर मिलता है, वह गाय का इंतजाम करता है। भोला को किसी तरह से पटाकर वह उधार में गांय ले आता है। यह उपन्यास का प्रस्थान है।

होरी की अपूर्ण आकांक्षा की आसान पूर्ति देखकर गाँव में कोई खुश नहीं होता। सभी की नज़र होरी की इस गाय पर लग जाती है। आसाढ़ की बरसात होती है, किसान खेत जोतने जाते हैं और तब ''राय साहब के कारकून ने कहला भेजा, जब तक बाकी न चुक जायगी, किसी को खेत में हल न ले जाने दिया जायगा।'' (''गोदान'', पृ.86) अब क्या हो? होरी महाजन झिंगुरी सिंह के पास रुपए लेने जाता है तो देखता है कि महाजन की नजर इसी गाय पर है। वे गाय लेना चाहते हैं। इस बीच होरी के भाई हीरा की धनिया से कहा-सुनी हो जाती है। हीरा का क्रोध भी इसी गाय पर उतरता है और हीरा गाय को जहर खिला देता है। इस तरह होरी की चिरसंचित आकांक्षा फिर ''अपूर्ण'' हो जाती है। आगे की सारी कथा इस गाय का कर्ज़ उतारने से बँधी हुई चलती है और फिर कभी गाय खरीदने का सामर्थ्य होरी नहीं जुटा पाता।

होरी गाय तो नहीं खरीदता परंतु उसके घर का कोई सदस्य जब भी स्वप्न देखता है तो

वह सोचता है कि ''सबसे पहले वह एक पछाईं गाय लाएगा।'' (''गोदान'', पृ.113 - गोबर यह सोचता है) रूपा का विवाह धनी किसान रामसेवक से होता है। वहाँ की सम्पन्नता देखकर रूपा के मन में भी गाय की वही स्मृति पुनः सजीव हो उठती है। ''उस गाय की याद अभी भी उसके दिल में हरी थी, जो मेहमान की तरह आयी थी और सबको रोता छोड़कर चली गई थी। वह स्मृति इतने दिनों के बाद अब और भी मृदु हो गई थी।'' - (गोदान, पृ.297) उपन्यास के अंत में होरी जब मरने लगा तो उसे वही ''गाय'' याद आयी। धनिया से कहे गए अंतिम शब्दों में भी उसी गाय की चर्चा करते हुए कहा, ''अब जाता हूँ। गाय की लासा मन में ही रह गई।'' (गोदान, पृ.300) प्रेमचंद ब्राह्मणवादी स्वार्थी प्रवृत्ति पर इस प्रसंग की निर्मिति द्वारा करारी चोट करते है। मरते समय यदि गाय दान किया जाए तो मरने वाला व्यक्ति सीधे स्वर्ग पहुँचता है। इस धार्मिक अंधविश्वास को बनाए रखने की पूरी कोशिश यहाँ ब्राह्मण दातादीन द्वारा की जा रही थी। धर्म का सहारा लेकर अशिक्षित गरीब व लाचार लोगों की इसी स्थिति का भरपूर फायदा उठाना पुरोहित वर्ग का अति प्रिय कर्म रहा है, जिसके कारण कोई श्रम किए बिना इस समुदाय का जीवनयापन बड़े मजे से चल रहा है। गाय का दान करने से होरी की आत्मा को मुक्ति मिलेगी यह अंधविश्वास पक्का करने के लिए दातादीन धनिया से गाय का दान करवाना चाहता है।

जीवन की विडंबना को उजागर करते हुए उपन्यास के अंत में प्रेमचंद ने दिखाया कि जिस गाय की कामना में होरी जीवन-भर दुःख पाता रहा, अनेक कष्ट झेले, अपमान सहा; फिर भी खरीद न सका; मरते समय ब्राह्मण दातादीन उसी का दान माँग रहा है। ''गोदान'' की इस परम्परा पर चोट करते हुए धनिया कहती है - ''महाराज घर में न गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है।'' (गोदान, पृ.300)

इस तरह हम देखते हैं कि ''गोदान'' की कथा का एक श्रमजीवी तबका गाय पालने की छोटी-सी आकांक्षा से संबंध रखता है। गाय ''गोदान'' की कथा को नियंत्रित करती है, उसे नया मोड़ देती है, उसमें गति देती है, अनेक पात्रों के चरित्र को खोलती है, लेखक की मान्यताओं को उजागर करती है। और वह जीवन की चरम उपलब्धि की प्रतीक बन जाती है। तथा अपूर्ण आकांक्षा का प्रतिरूप हो जाती है। एक स्तर पर यह उपन्यास होरी-धनिया की कहानी होते हुए भी अपूर्ण आकांक्षा की मृग-मरीचिका की कहानी बन जाता है।

## 1.6 किसानों का आर्थिक-सामाजिक शोषण

''गोदान'' में होरी-धनिया ''मोटा-झोटा खाकर मरजाद के साथ रहना'' चाहते हैं। वे एक किसान के रूप में जीवन बसर करते रहने के लिए प्रयत्नशील हैं। गाय पालने की एक छोटी-इच्छा जरूर है, परंतु नीति और धर्म के मार्ग पर चलकर इस इच्छा को पूरी करना चाहते हैं। मेहनती हैं, ईमानदार हैं - परंतु वर्तमान व्यवस्था में वे अपनी मर्यादा का पालन नहीं कर पाते। किसानी और मर्यादा में से उन्हें किसी एक को तिलांजलि देनी है। होरी किसान बने रहना चाहता है, परंतु रह नहीं पाता।

प्रेमचंद ने होरी की इस कामना के विरोधियों के अंतःसंबंध और उनके हथकण्डों का पर्दाफाश किया है। प्रेमचंद प्रथमतः ज़मींदार विरोधी थे। इस तंत्र की पद्धति का उद्‌घाटन करते हुए साम्राज्यवाद विरोधी हो गए। ''गोदान'' में अंग्रेज़ी राज का पोषण राज्य-कर्मचारियों के द्वारा होता है। होरी के गाँव में पटेश्वरी सरकारी नौकर है। वह एक बार धमकाते हुए कहता है, ''मैं ज़मींदार या महाजन का नौकर नहीं हूँ, सरकार बहादुर

का नौकर हूँ, जिसका दुनिया भर में राज है और जो तुम्हारे महाजन और ज़मींदार दोनों का मालिक है।'' (''गोदान'', .पृ.155)

प्रेमचंद ने ज़मींदारों की असलियत का बयान करते हुए शक्तिशाली ब्रिटिश राज्य के शोषण एवं आतंक की ओर इशारा किया है। राय साहब कहते हैं, ''हम बिच्छू नहीं हैं कि अनायास ही सबको डंक मारते फिरें। न गरीबों का गला दबाना कोई बड़े आनंद का काम है।'' परंतु करें क्या? ''अफसरों को दावतें कहाँ से दूँ, सरकारी चन्दे कहाँ से दूँ?...आएगा तो असामियों ही के घर से। आप समझते होंगे, ज़मींदार और ताल्लुकेदार सारे संसार का सुख भोग रहे हैं। उनकी असली हालत का आपको ज्ञान नहीं; अगर वह धर्मात्मा बन कर रहे तो उनका जिन्दा रहना मुश्किल हो जाए। अफसरों को डालियाँ न दें, तो जेलखाना हो जाए।'' (''गोदान'', पृ.145) एक दूसरे प्रसंग में वे कहते हैं, ''वसूली सरकार के घर गई। बकाया असामियों ने दबा लिया। तब मैं कहाँ जाऊं?'' (''गोदान'', पृ.142) तात्पर्य यह है कि होरी का शोषण सूत्र अंग्रेज़ी राज तक जाता है। प्रेमचंद ने चूँकि अंग्रेज़ों की शोषण प्रक्रिया का उद्‌घाटन नहीं किया है, इसलिए वे आवश्यकतानुसार उस ओर इशारा करके अपनी मूल कथा-भूमि में लौट आते हैं।

यदि होरी से पूछा जाए तो वह यही कहेगा कि लगान की अधिकता सबसे अधिक पीड़क है। धनिया सोचती है - ''यद्यपि अपने विवाहित जीवन के इन बीस वर्षों में उसे अच्छी तरह अनुभव हो गया था कि चाहे कितनी ही कतर ब्योंत करो, कितना ही पेट-तन काटो, चाहे एक-एक कौड़ी को दाँत से पकड़ो; मगर लगान बेबाक होना मुश्किल है।'' (''गोदान'', पृ.7) फिर ज़मींदार का कारिन्दा कभी लगान की रसीद नहीं देता। इसलिए जब भी ज़मींदार किसी किसान को दण्डित करना चाहता है, उस पर बकाया लगान का दावा कर देता है। इस तरह दो-तीन बार लगान चुका देने के बाद एक स्थिति ऐसी आती है जब किसान रुपए नहीं जुटा पाता और फिर उसे खेत से बेदखल कर दिया जाता है। उसके मौरुसी हक छीन लिए जाते हैं। (गोबर कहता है, ''मैं अदालत में तुमसे गंगाजली उठवाकर रुपए दूँगा; इसी गाँव में एक सौ सहादतें दिलाकर साबित कर दूँगा कि तुम रसीद नहीं देते। सीधे-सादे किसान हैं, कुछ बोलते नहीं, तो तुमने समझ लिया कि सब काठ के उल्लू हैं।'' (''गोदान'', पृ.187)

फिर ज़मींदार किसानों पर बकाया लगान का दबाव या दावा ऐसे नाजुक अवसरों पर करते हैं, जब किसान सबसे ज्यादा संकट में होते हैं या जब उन्हें लगता है कि किसान किसी भी तरह से रुपए नहीं जुटा सकते। रायसाहब ने होरी से बकाया लगान की माँग तब की, जब पहली बरसात हुई और किसान खेत बोने के लिए जाने वाले थे। ऐसे नाजुक अवसर पर महाजन उद्धारक का बाना पहनकर कर्ज़ देने के लिए सामने आता है और किसान ज़मींदार की चंगुल से निकलकर महाजन की गिरफ्त में आ जाता है और कर्ज़ वह मेहमान है जो एक बार आकर जाने का नाम नहीं लेता। प्रेमचंद ने ''गोदान'' में कर्ज़ और सूद का थोड़ा-बहुत हिसाब दिया है - होरी ने ''मंगरु शाह से आज पाँच साल हुए, बैल के लिए साठ रुपए लिए थे; उसमें साठ दे चुका था; पर वह साठ रुपए ज्यों-के-त्यों बने हुए थे। दातादीन पण्डित से तीस रुपए लेकर आलू बोए थे। आलू तो चोर खोद ले गए, और उसके तीन बरसों में सौ हो गए थे। दुलारी विधवा सहुआइन थी, जो गाँव में नोन, तेल, तमाखू की दूकान रखे हुए थी। बँटवारे के समय उससे चालीस रुपए लेकर भाइयों को देना पड़ा था। उसके भी लगभग सौ रुपए हो गए थे; क्योंकि आने रुपए का ब्याज था। (गोदान, पृ.32)

शोभा एक बार मँगरु साह से पूछता है - ''अच्छा, ईमान से बताओ साह, कितने रुपए दिए थे, जिसके अब तीन सौ रुपए हो गए हैं।''

''जब तुम साल के साल सूद न दोगे, तो आप ही बढ़ेंगे।''
''पहले-पहल कितने रुपए दिए थे तुमने? पचास ही तो।'' (गोदान, पृ.154)

इसी तरह ''तीस रुपए का कागद लिखने पर कहीं पचीस रुपए मिलेंगे और तीन-चार साल तक न दिए गए तो पूरे सौ हो जाएंगे।'' (गोदान, पृ.87) भारतीय किसान को शोषण के पंजों में जकड़कर ज़मींदारी और महाजनी प्रथा ने इस प्रकार निचोड़ दिया है कि उन्हें अपने जीवन में किसी प्रकार का उत्साह और उमंग नहीं बच पाती, जीवन में केवल अंधकार छा जाता है जैसे प्रेमचंद लिखते हैं 'जीवन में न कोई आशा है, न कोई उमंग, जैसे उनके जीवन के सोते सूख गए हों और सारी हरियाली मुरझा गई हो। जेठ के दिन है, अभी तक खलिहानों में अनाज मौजूद है, मगर किसी के चेहरे पर खुशी नहीं है। बहुत कुछ तो खलिहान में ही तुलकर महाजनों और कारिन्दों की भेंट हो चुका है, और जो कुछ बचा है वह भी दूसरों का है। भविष्य अंधकार की भांति उनके सामने है। ..... उनके जीवन में स्वाद का लोप हो गया है।'

इसी तरह होली में नकल करते हुए महाजनी शोषण का भण्डा-फोड़ किया गया है।

फिर दूसरी नकल हुई, जिसमें ठाकुर ने दस रुपए का दस्तावेज लिखकर पाँच रुपए दिये, शेष जनराने और तहरीर और दस्तूरी और ब्याज में काट लिए।

किसान आकर ठाकुर के चरण पकड़कर रोने लगता है। बड़ी मुश्किल से ठाकुर रुपए देने पर राज़ी होते हैं। जब कागज लिख जाता है और असामी के हाथ में पाँच रुपए रख दिये जाते हैं तो वह चकराकर पूछता है -

' 'यह तो पाँच ही हैं मालिक! '
'पाँच नहीं, दस हैं। घर जाकर गिनना। '
'नहीं सरकार, पाँच हैं!'
'एक रुपया नजराने का हुआ कि नहीं? '
'हाँ, सरकार!'
'एक तहरीर का? '
'हाँ, सरकार!'
'एक कागद का? '
'हाँ, सरकार!'
'एक दस्तूरी का? '
'हाँ, सरकार!'
'एक सूद का? '
'हाँ, सरकार!'
'पाँच नगद, दस हुए कि नहीं? '
'हाँ, सरकार!अब यह पाँचों भी मेरी ओर से रख लीजिए। '
'कैसा पागल है? '
'नहीं सरकार, एक रुपया छोटी ठकुराइन का नजराना है, एक रुपया बड़ी ठकुराइन का। एक रुपया छोटी ठकुराइन के पान खाने को, एक बड़ी ठकुराइन के पान खाने को। बाकी बचा एक, वह आपकी क्रिया-करम के लिए। ' '

लगान और सूद के अलावा भी किसानों के शोषण के कई अन्य तरीके ज़मींदारों ने खोज निकाले हैं जिनमें बेगार, नजराना, डाँड, दस्तूरी, शगुन आदि अनेक ग़ैर-कानूनी

कर शामिल हैं। इन्हें वसूल करने का अधिकार ज़मींदार, कारिन्दे, महाजन, सरकारी कर्मचारी, पटवारी, पुलिस, कचहरी सभी के पास है और भारतीय किसान ''सबका नरम चारा'' बना हुआ है। प्रेमचंद उपन्यास की कथा को रोक-रोककर इन हथकंडों से पाठकों को परिचित कराते रहते हैं।

प्रेमचंद मानते हैं कि किसी अच्छे या भले ज़मींदार से इस समस्या का समाधान नहीं हो सकता क्योंकि ''यह संबंध ही ऐसा है कि एक ओर प्रजा में भय, अविश्वास और आत्महीनता के भावों को पुष्ट करता है और दूसरी ओर ज़मींदारों को अभिमानी, निर्दय और निरंकुश बना देता है।'' (''गोदान'', पृ.87) इसलिए प्रेमचंद को जब भी अवसर मिला है, उन्होंने इस बिचौलिये वर्ग के रूप में ज़मींदारों के अस्तित्व का विरोध किया है।

जिस तरह ज़मींदार और महाजन एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं, उसी तरह महाजन और धर्म भी एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। ज्यों ही कोई आसामी रुपए देने में आनाकानी करता है, महाजन उसकी धार्मिक भावनाओं को उकसाता है। दातादीन ने होरी को तीस रुपए कर्ज़ दिए थे, जो अब दो सौ रुपए हो गए। गोबर कानून सम्मत सत्तर रुपए देना चाहता है। इस पर पण्डित दातादीन होरी को कहता है । ''सुनते हो होरी, गोबर का फैसला? मैं अपने दो सौ छोड़ के सत्तर रुपए ले लूँ, नहीं अदालत करूँ। इस तरह का व्यवहार हुआ तो कै दिन संसार चलेगा? और तुम बैठे सुन रहे हो; मगर यह समझ लो, मैं ब्राह्मण हूँ। मेरे रुपए हजम करके तुम चैन पाओगे। मैंने ये सत्तर रुपए भी छोड़े अदालत भी न जाऊंगा, जाओ। अगर मैं ब्राह्मण हूँ तो अपने पूरे दो सौ रुपए लेकर दिखा दूँगा और तुम मेरे द्वार पर आओगे और हाथ बाँधकर दोगे।'' (गोदान, पृ.184) जाहिर है कि होरी पर इस धमकी का असर पड़ता है और वह दो सौ रुपए चुकाने के लिए राजी हो जाता है। फिर जजमानी का एक आर्थिक रूप भी है। ब्राह्मणों को मिलने वाली जजमानी की व्याख्या करते हुए पं.दातादीन कहते हैं, ''ज़मींदारी मिट जाय, बंकघर टूट जाय, लेकिन जजमानी अंत तक बनी रहेगी। जब तक हिन्दू जाति रहेगी, तब तक ब्राह्मण भी रहेंगे और जजमानी भी रहेगी। सहालग में मजे से घर बैठे सौ-दो सौ फटकार लेते हैं। कभी भाग लड़ गया, तो चार-पाँच सौ मार लिया। कपड़े, बरतन, भोजन अलग। कहीं न कहीं नित ही कार-परोजन पड़ा ही रहता है। कुछ न मिले तब भी एक दो थाल और दो-चार आने दक्षिणा मिल ही जाते हैं।'' - (गोदान, पृ.206)

होरी की बरबादी में जहाँ धर्म की भूमिका है, वहाँ बिरादरी का भय भी कम नहीं है। गोबर और झुनिया के संबंध से बिरादरी को एतराज है। पंचों ने होरी पर सौ रुपए नकद और तीस मन अनाज की डाँड लगा दी। होरी ने रुपयों के लिए अपना घर गिरवी रखा तथा फसल पर पैदा हुआ अनाज डाँड में दे दिया। इस स्थिति पर टिप्पणी करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है कि होरी में ''बिरादरी का वह आतंक था कि अपने सिर पर लादकर अनाज ढो रहा था, मानो अपने हाथों अपनी कब्र खोद रहा हो। ज़मींदार, साहूकार, सरकार किसका इतना रौब था? कल बाल-बच्चे क्या खायेंगे, इसकी चिन्ता प्राणों को सोख लेती थी; पर बिरादरी का भय पिशाच की भाँति सिर पर सवार आंकुस दिये जा रहा था।'' (''गोदान'', पृ.108-109)

प्रेमचंद ने दिखाया है कि धर्म, बिरादरी, सरकार, ज़मींदार 'पंच ' सब वही लोग हैं जो समाज के कर्ता-धर्ता बने हुए हैं। उन्हीं पंचों में से कोई कारिन्दा है, कोई महाजन, कोई पुजारी है, कोई पटवारी। इनकी अलग-अलग भूमिकाएँ हैं। सब मिलकर किसान को तबाह करने में लगे हुए हैं। कोई किसी से कम नहीं है। सब अलग-अलग तरीके से किसान को लूटते हैं। पुजारी धर्म-भावना का सहारा लेता है, पुलिस डांडे के बल से, कचहरी कानून से, बिरादरी दबाव से तथा ज़मींदार सभी हथकंडों से शोषण करता है।

धनिया इन सबको ''हत्यारा'' कहकर अपनी भड़ास निकालती है।

''गोदान'' में एक स्थान पर सारे शोषक इकट्ठे हो जाते हैं। हीरा ने होरी की गाय को जहर खिलाकर मार डाला। सारे गाँव में हंगामा हुआ। रायसाहब का कारिन्दा नोखेराम आया, पंडित दातादीन आए, महाजन झिंगुरी सिंह आए, अंग्रेज़ बहादुर के पटवारी पटेश्वरी भी पहुँचे। पुलिस आयी। पंडित जी ने धर्म के दण्ड का ज़ोर दिखाया। पुलिस हीरा के घर की तलाशी लेने के लिए तैयार हुई। होरी की मर्यादा चेता जागी। सबने मिल-जुलकर थानेदार के लिए रिश्वत की राशि तय की। पंच बिचौलिए बन गए। झिंगुरी सिंह महाजन बन गए। उन्होंने होरी को तीस रुपए उधार दिए। इनमें से आधे पुलिस को और आधे पंचों को मिलने थे। यहाँ प्रेमचंद ने लेखकीय कौशल का प्रयोग करके रिश्वत के रुपए बचा लिए। धनिया का आकस्मिक पराक्रम काम कर गया परंतु मान्य स्थितियों में तो होरी लूट ही लिया जाता।

प्रेमचंद ने शोषण की इस प्रक्रिया का चित्रण करते हुए किसी एक व्यक्ति या संस्था को जिम्मेदार नहीं ठहराया है, बल्कि शोषण के संपूर्ण तंत्र को उत्तरदायी ठहराया है। दरअसल वे इन शोषकों के शोषण की कहानी कहने के लिए नहीं बैठे हैं। ये सब लोग तो आवश्यक बुराई के रूप में उपन्यास में आ जाते हैं। लेखक तो होरी की बदहाली की कथा कहना चाहता है। उसे उसकी विफलताओं की दास्तान सुनानी है, उसकी विडम्बना को उजागर करना है। होरी के बचने का कोई रास्ता खोजना चाहते हैं, वे यह जानते हैं कि इस तंत्र में होरी के बचने का कोई रास्ता नहीं है। वैसे तो होरी का कोई सहायक भी नहीं है, अगर होता तो भी इस तंत्र में उसे कोई सहयोग दिया नहीं जा सकता। प्रेमचंद ने इस सवाल का भी दरवाज़ा बंद कर दिया है कि कानून बना देने से भी होरी को कोई सहायता हो सकती है। झिंगुरी सिंह कानून की सीमा बताते हुए कहता है - ''कानून और न्याय उसका है, जिसके पास पैसा है। कानून तो है कि महाजन किसी आसामी के साथ कड़ाई न करे, कोई ज़मींदार किसी काश्तकार के साथ सख्ती न करे, मगर होता क्या है, रोज ही देखते हो। ज़मींदार मुसक बंधवा के पिटवाता है और महाजन लात और जूते से बात करता है। जो किसान पोढ़ा है, उससे न ज़मींदार बोलता है, न महाजन। ऐसे आदमियों से हम मिल जाते हैं और उनकी मदद से दूसरे आदमियों की गर्दन दबाते हैं।.....कचहरी-अदालत उसी के साथ है, जिसके पास पैसा है। हम लोगों को घबराने की कोई बात नहीं।'' -- (गोदान, पृ.205)

## 1.7 होरी का स्थितियों से समझौता

शोषण की इतनी भीषणता के बावजूद प्रेमचंद के किसान प्रायः विद्रोह नहीं करते, विशेष रूप से होरी के मन में कभी विरोध का स्वर नहीं उठता। वह तो मानता है कि किसान की कुशल दबे रहने में ही है। धनिया जरूर कभी-कभी विद्रोही तेवर दिखाती है, लेकिन वह उसकी पीड़ा की कराह मात्र है, उसकी कराह विद्रोह की सीमा तक नहीं बढ़ती। धनिया की तरह अन्य किसान भी आपसी बातचीत में, हँसी-मजाक में, नकल-प्रहसन में अपने भावों को प्रकट करते हैं। परंतु ये भाव संगठित रूप ग्रहण नहीं कर पाते।

दरअसल किसान ज़मींदार और सरकार द्वारा किए जा रहे शोषण को अधिकांशतः समझते है लेकिन शोषण के चंगुल से निकल नहीं पाते। उनका रोजमर्रा का जीवन ज़मींदार की जमीन से जुड़े रोजगार व काश्तकारी से नियंत्रित है। रोजगार व मजदूरी के लिए ये पूर्णतः ज़मींदार पर निर्भर है। ज़मींदारों के खेतों को जोतने, सारा साल

मेहनत-मुशक्कत करने पर साल भर पूरा पड़े इतना भी अनाज किसान के पास नहीं बचता। लगान के रूप में आधा अनाज वापस करना पड़ता है और भूखों रहने की विवशता को झेलना पड़ता है। लेकिन लगान देना तो किसान के लिए अनिवार्य है, किसान खुद भी इसे उचित मानते है। इसलिए वे कभी विद्रोह नहीं करते। किसानों ने विद्रोह तब किया है जब शोषण की सीमा वैध एवं परंपरानुमोदित रूप से बहुत आगे बढ़ जाती है। लगान देना वह वैध मानता है। पण्डे-पुजारी भी जो उसका शोषण करते हैं, उन्हें किसान ''पुण्य'' मानता है। महाजनी शोषण से किसान पीड़ित तो बहुत होता है, परंतु यह आम तौर से ''उपकार'' के रुपए में लिया गया कर्ज़ होता है। रुपया लेते वक्त किसान को महाजन की चिरौरी करनी पड़ती है, तब वह एहसान करता हुआ रुपए उधार देता है। इसलिए इनके प्रति भी घृणा दब जाती है। होरी तो आम भारतीय किसानों की तरह ''असमानता की परंपरागत संस्कृति'' में विश्वास करता है। इसलिए अपने शोषकों को वह शोषकों के रूप में नहीं पहचानता, वरन् उन्हें अपना ''हितैषी'' समझता है। इसलिए अपनी बदहाली के लिए अपने भाग्य व कर्मफल को दोष देकर संतुष्ट हो जाता है।

प्रेमचंद के साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें उन्होंने किसानों के शोषकों की सुस्पष्ट तस्वीर पेश कर दी है। होरी की बदहाली के जिम्मेदार लोग पाठकों को स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

गोदान भारतीय सीमांत किसान के जीवन संघर्ष का वास्तववादी उपन्यास है। ''होरी'' का शोषक शक्तियों द्वारा हो रहा शोषण और उसकी असहायता तथा व्यथा को हमारे सामने साकार करने वाली प्रेमचंद की यह रचना हिंदी उपन्यास साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना मानी जाती है। कारण यह रचना पहली बार समाज के सबसे परीश्रमी लेकिन अभाव में रहने के लिए मजबूर, साधनहीन, वंचित किसान के जीवन यथार्थ को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। अर्थ-उत्पादन के मूल साधनों के असमान बंटवारे, असमान अधिकार और भागीदारीपर सवाल उठाती है। होरी और धनिया के जीवन भर के परिश्रम का मूल्य उन्हें अपनी पाँच बीघे जमीन से बेदखल करके मजदूर में परिवर्तित करती है। जमीन और सत्ता के अधिकारियों द्वारा महाजन, पुलिस और पुरोहितों की सहायता से गरीब किसानों के निरंतर शोषण किए जाने की साजिशे रचाई जाती है। लगान, डांड व धर्म पुण्य के नाम पर शोषण की इस प्रक्रिया में अंततः किसान सब कुछ से हाथ धो बैठता है। शोषकों के षड़यन्त्र और दबाव को वह महसूस तो करता है, लेकिन विरोध में शब्द भी नहीं कहता। परंपरागत मानसिकता और अंधःविश्वासों से वह भी घिरा हुआ है। वह इसे अपनी नियति मान कर स्वीकारता चलता है, जब तक इस अंधकार से निकलने का रास्ता उसे नहीं मिलता वह इसमें गहरे डुबता चला जाएगा, इसका उसे अहसास भी होता है। होरी शोषण के इस षडयन्त्र में फँसता चला जाता है। प्रेमचंद ने होरी को केवल गरीब, निर्धन किसान के रुप में ही चित्रित नहीं किया है बल्कि अंधःविश्वासी, रुढ़िग्रस्त, धर्मभीरु और दिखावे की भावना रखने वाले ग्रामीण किसान के रुप में भी चित्रित किया है। होरी का अपढ़, गंवार, अंधविश्वासी और धर्मभीरु होना उस समाज की उपज है, जिसे होरी जैसे किसानों को इसी दशा और मानसिक स्थिति में रखने से फायदा है। एक निर्जीव साधन बनाकर रखने में ज़मींदार, साहूकार और पुरोहितों का स्वार्थ ही स्वार्थ है। यह निर्जीव साधन इसे अपना प्रारब्ध मानकर, बिना विरोध किए चुपचाप जीये चला जाता है।

किसान का चौतरफा शोषण करने वाली शक्तियाँ अंग्रेज सरकार की शोषक नीतियों को ही अपनाती है। ज़मींदार वर्ग अंग्रेज शासन के प्रति अपनी स्वामिभक्ति को दिखाने के

लिए हर संभव प्रयास करता रहता है। किसानों से दूगना-चौगुना लगान वसुल करके, सरकारी तिजोरियाँ भरकर अपनी स्वामिभक्ति का प्रमाण देना चाहता है। इस प्रक्रिया में किसानों को उनकी जमीन से बेदखल करके उन्हें किसान से मजदूर बनाए जाने की पूरी कोशिश की जाती रही है। होरी का प्रयास केवल पाँच बीघे खेत को जी जान से बचानें का और मजदूर बनने से बचने का आंखरी प्रयास है। प्रेमचंद मानते है जब तक ज़मींदारी व्यवस्था समाप्त नहीं होगी,किसानों का ज़मीन से बेदखल होकर मजदूर बनना टल नहीं सकता।

प्रेमचंद शोषण की इस प्रक्रिया के लिए किसी एक व्यक्ति या संस्था को जिम्मेदार नहीं मानते, बल्कि शोषण के संपूर्ण तंत्र को इसके लिए जिम्मेदार मानते है। ''गोदान'' में ''होरी'' की बदहाली की कथा के द्वारा यह भी बताते है कि केवल उपरी सुधारों से किसानों का भला नहीं हो सकता। किसानों की भलाई के लिए इस तंत्र को, पूरी व्यवस्था को बदलना जरुरी होगा। ज़मींदारी प्रथा को समाप्त किए जाने के लिए कानूनी प्रावधान भी सक्षम हो सकेंगे अथवा नहीं इसके बारे में प्रेमचंद आशंकित है। सरकारी तंत्र से जुड़े सभी सरकारी अधिकारी और ज़मींदारी से जुड़े कारिंदे,महाजन और पुरोहित तक किसी भी कानून को लागू न होने देने की पूरी कोशिश करेंगे। क्योंकि इन सभी का स्वार्थ एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। सत्ता और धन के जोर पर कानून को भी यही लोग खरीद लेंगे और कानून भी गरीब किसान को सहायता नहीं कर पाएगा, न्याय मिलने की बात तो बहुत दूर रही।

प्रेमचंद इस बात से पूरी तरह से सहमत थे कि जब तक रैयतवारी और इस्तमवारी जैसी शोषक प्रथाएं कायम रहेगी, तब तक किसानों का आर्थिक, सामाजिक, शोषण खत्म नहीं होगा। देश के स्वतंत्र होने पर ही समानता पर आधारित शोषण विहीन समाज की स्थापना की प्रेमचंद कल्पना करते है। इस कल्पना को साकार होने का विश्वास उन्हें शहर में मजदूरी करके पेट पाल रहे गोबर के विचार चेतना में आये बदलाव के रुपमें मिलता है। ''होरी'' की परंपरागत मान्यता और अंधःविश्वास को दूर करने की ''गोबर'' कोशिश करता है। कर्म और जन्म सिद्धान्त की झूठी गढ़ी गई कहानी पर विश्वास करके अमीर-गरीब होने को भाग्य का लिखा मानकर चुपचाप शोषण को सहते जाना गोबर की चेतना को मान्य नहीं। समाज के कुछ ठेकेदार अपने स्वार्थ के लिए समय-समय पर बहुजन समाज को धर्म के नाम पर लूटते जा रहे हैं। पाप-पुण्य की कल्पना, धर्म के आतंक और अंधविश्वास से घिरे 'होरी' को इस सबसे बाहर निकालने का गोबर अपने तई बहुत प्रयास करता है, लेकिन होरी उसकी एक नहीं सुनता। असमानता और भेदभाव को जन्म देने वाले इन विश्वासों का प्रेमचंद ने बार-बार गोबर के माध्यम से खंडन किया है। गांवो से शहरों में मजदूरी की तलाश में जा बसे मजदूरों में स्वतंत्रता और समानता की चेतना का जागृत होना, नगरीकरण और औद्योगिकरण से संभव हो पाया है। गोबर जैसे किसान से मजदूर बनी नई पीढ़ी अधिक निश्चिंत, निर्भिक, समझदार और विद्रोही बन रही है। चौतरफा होने वाले शोषण को झेलते रहने के बावजूद होरी जैसे किसान विद्रोह नहीं करते, क्योंकि वे इसे अपना भाग्य मानकर कर्मफल को दोष देकर संतुष्ट हो जाते है। असमानता की परंपरागत संस्कृति में ये विश्वास करते है। शोषकों की शोषक प्रवृत्ति को समझकर भी उससे दबे रहने में ही अपनी भलाई देखते है। उनके मन के विद्रोही भाव संगठित रुप ग्रहण नही कर पाते। प्रेमचंद द्वारा चित्रित किसान दो प्रकार की असमानताओं में भी विश्वास करता है, एक है आर्थिक असमानता और दूसरी जाति के आधार पर तय श्रेणीगत असमानता। अतः दो प्रकार से विभाजित किसान शक्ति का एक साथ संगठित होकर आर्थिक और सामाजिक मोर्चे पर विद्रोह करना भारतीय समाजव्यवस्था में संभव ही नहीं लगता। जब तक कि सामाजिक

समानता पर आधारित शोषण विहीन समाजव्यवस्था यहाँ पर स्थापित नहीं होती, आर्थिक समानता और न्याय की कल्पना महज एक कल्पना मात्र ही हो सकती है।

## 1.8 सारांश

इस इकाई का आपने ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है, आपने यह निश्चित रूप से महसूस किया होगा कि प्रेमचंद का 'गोदान ' किसान जीवन के संघर्ष को अभिव्यक्त करने वाली सबसे महत्वपूर्ण रचना है। यह प्रेमचंद की आकस्मिक रचना नहीं है, वरन् उनके जीवन-भर के सर्जनात्मक प्रयासों का निष्कर्ष है।

होरी जैसे अल्पभूधारक किसान का जीवन-भर सामंती व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष भारतीय किसान की त्रासदी को हमारे समक्ष स्पष्ट कर देता है। 'अपनी जान और कुल-मर्यादा से भी प्यारी जमीन ' को बचाने के प्रयासों में अपना सब कुछ खोकर वह मजदूर हो जाने पर विवश हो जाता है। ज़मींदार, साहूकार, अफसर, पटवारी और पुरोहित जैसी अनेक शोषक शक्तियाँ एक किसान को भूमि से वंचित कर मजदूरी की ओर धकेलने में सहायक हो जाती है। शोषक यहाँ ज़मींदार ही है जो पहले सामंतवाद को पोषित कर रहा था अब पूंजीवादी व्यवस्था का नियामक होता चला जा रहा है। वास्तव में गोदान एक ऐसे काल खंड की कथा है जिसमें सामंती समाज के अंग किसान और ज़मींदार दोनों ही मिट रहे हैं और पूंजीवादी समाज के मजदूर तथा उद्योगपति उनकी जगह ले रहे हैं।

प्रेमचंद ने 'जबरदस्ती ' (8 मई, 1933) नामक लेख में भारतीय किसान की दयनीय स्थिति के बारे में लिखा है ''भारतीय किसान की इस समय जैसी दयनीय दशा है, उसे कोई शब्दों में अंकित नहीं कर सकता। उनकी दुर्दशा को वे स्वयं जानते हैं - या उनका भगवान जानता है। ज़मींदार को समय पर मालगुजारी चाहिए, सरकार को समय पर लगान चाहिए, किसान को खाने के लिए दो मुट्ठी अन्न चाहिए, पहनने के लिए एक चीथड़ा चाहिए, चाहिए सब कुछ, पर एक ओर तुषार तथा अतिवृष्टि फसल चौपट कर रही है, एक ओर आंधी उनके रहे-सहे खेत को भी भ्रष्ट कर रही है - दूसरी ओर रोग, प्लेग, हैजा, शीतला उनके नौजवानों को हरी-भरी तथा लहराती जवानी में उसी तरह उठाए लिए चली जा रही है, जिस तरह लहलहाता खेत अभी छः दिन पूर्व के पत्थर-पाले से जल गया। गल्ला पैदा हो रहा है, पर भाव इतना मंदा है कि कोई दो वक्त भोजन भी नहीं कर सकता। स्त्री के तन पर जो दो-चार गहने थे, वे साहूकार के पेट से बचकर सरकार की मालगुजारी के पेट में चले गए। नन्हे बच्चे जो चीथड़े ओढ़कर जाड़ा काटते थे, वही अब उनका पिता पहनकर अपने तन की लाज ढक रहा है। माता के पास केवल इतना ही वस्त्र है, जितने से वह घूंघट काढ़ सके - धोती चाहे घुटने तक ही क्यों न खिसक आए।''

प्रेमचंद अपने लेखों में बार-बार किसान द्वारा एक बार कर्ज लेने पर जिंदगी भर तक उस कर्जे के बोझ को ढोते रहने की विवशता को रेखांकित करते है। होरी द्वारा कर्ज से मुक्ति के लिए जी-जान से की जाने वाली कोशिशे उसकी विवशता को बयान करती हे। चौतरफा शोषण को झेलने के लिए मजबूर होरी, कुछ न कर पाने की स्थिति में भाग्य पर दोष लगाकर और शिथिल हो जाता है। मजबूरी में ही सही ज़मींदारों के पैर सहलाने में ही वह अपना भला समझता है। किसानों के भाग्यवादी, अंधविश्वासी होने के कारण भी उसका सामाजिक और आर्थिक शोषण होने की संभावनाएँ बढ़ती रहती है। प्रेमचंद ने किसानों के शोषण की इस न खत्म होने वाली श्रृंखला में होरी पर बिरादरी द्वारा लगाए गए जुर्माने और डांड के प्रसंग को विस्तार से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। जाति प्रधान

सामाज-व्यवस्था की निष्ठुर अमानवीयता ने होरी पर लगाए जुर्माने और डांड को चुकाने के लिए होरी खुद ही अनाज के टोकरे भर-भर कर पंचायत में पहुँचा आता है। वह बिरादरी द्वारा बहिष्कृत किए जाने के डर से विवश होकर यह सब करता है। उसका शोषण करने वालों के समक्ष समर्पण, अपने बचाव का ही प्रयास है। समर्पण और समझौता किसान जीवन की त्रासदी के दो महत्वपूर्ण सत्य है। प्रेमचंद होरी के माध्यम से भारतीय किसान के चौतरफा शोषण के कारण हुई उसकी दयनीय स्थिति को उजागर करते है।

महाजनी सभ्यता के पूंजीवादी व्यवस्था के रूप में उभरते खतरे को प्रेमचंद जान चुके थे। किसान और उसके भूमि से जुड़े रिश्ते को धीरे-धीरे यह खत्म कर रही थी तो ज़मींदारों को कर्ज दे-देकर उनके अस्तित्व को मिटा रही थी। कृषक-सभ्यता के ये दोनों स्तंभ धराशायी हो रहे थे। होरी का किसान से मजदूर बनना इसी वास्तविकता को दर्शाता है। होरी का यह निर्णय उसका अपना नहीं है यह उसकी विवशता है और आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक दबावों का परिणाम है। हम देखते हैं कि प्रेमचंद में कृषक सभ्यता, संयुक्त परिवार व्यवस्था आदि के प्रति मोह है लेकिन इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि प्रेमचंद ज़मींदारी प्रथा या सामन्ती प्रथा में जी रहे किसानों के शोषण का विरोध नहीं करते। ज़मींदारी प्रथा के शोषण के तरीकों का उन्होंने पर्दाफाश किया है, लेकिन औद्योगिकरण और नगरीकरण के कारण व्यक्तिगत संबंधों में पड़ने वाली दरार को वे अच्छी प्रकार समझ चुके थे। होरी और गोबर के बीच में समाप्त होते नेह और गोबर का केवल अपने बारे में सोचना इसी का संकेत है। गोबर अपनी कमाई का एक पैसा भी घर नहीं भेजता और उसे यह व्यवहार युक्तिसंगत भी लगता है, "वे लोग तो रुपये पाते ही आकाश में उड़ने लगेंगे। दादा को तुरंत गाय खरीदने और अम्मा को गहने बनवाने की धुन सवार हो जाएगी।" (गोदान, पृ.168)

होरी और धनिया की बेहतर जीवन की जो आशाएं गोबर के साथ जुड़ी थी, वह सब गोबर के स्वार्थपूर्ण व्यवहार से चूर-चूर हो जाती है। प्रेमचंद इन बदलते संबंधों के प्रति चिंतित थे और महाजनी सभ्यता को इसके लिए जिम्मेदार मानते थे। जिसेकि अपनी मौरुसी की पाँच बीघा जमीन को जी-जान से बचाने की कोशिश करते होरी-धनिया के माध्यम से हमारे सामने स्पष्ट कर देते हैं। ज़मींदारी प्रथा भी चरमराती अवस्था में जैसे-तैसे कर्ज के सहारे जीवित थी। महाजनों, बैंकरों की चिरौरी करके अपनी झुठी शान बचाने के लिए और सरकारी अधिकारियों की आवभगत के लिए रुपया उधार लेकर किसी तरह अंतिम सांसे ले रही थी।

आपने इस इकाई के अध्ययन के दौरान यह महसूस किया होगा कि होरी की 'गाय ' की लालसा और उसे पाने और खोने की घटनाओं का महत्व केवल होरी के जीवन की त्रासदी की ही अभिव्यक्ति नहीं है। बल्कि उसके सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थिति की वास्तविकता को उजागर करने की यथार्थवादी दृष्टि भी है।

गोदान काल के प्रेमचंद को यह विश्वास होने लगा था कि बीसवीं सदी समाजवाद की सदी होगी, जिसमें अमीर-गरीब के बीच की गहरी खाई को कम किया जाएगा। प्रेमचंद समझने लगे थे कि तमाम विरोधों के बावजूद समाजवाद को रोकना आसान नहीं होगा और यह आकर ही रहेगा। 'निकट भविष्य में आजकल का पूंजीवाद जमीन पर पड़ा होगा और उसकी लाश पर समाजवाद की धारा बह रही होगी। ' प्रेमचंद बहुत हद तक नेहरू जी के भारत में समाजवादी व्यवस्था ही असमानता और शोषण को खत्म कर सकती है, इस विचार से सहमती दर्शाते है। गोदान में राय साहब द्वारा इस विचार की

अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है - "जब तक किसानों को ये रियायतें अधिकार के रूप में न मिलेंगी, केवल सद्भावना के आधार पर उनकी दशा नहीं सुधर सकती। स्वेच्छा अगर स्वार्थ छोड़ दे तो अपवाद है। मैं खुद सद्भावनावश करते हुए भी स्वार्थ नहीं छोड़ सकता और चाहता हूँ कि हमारे वर्ग को शासन और नीति के बल से अपना स्वार्थ छोड़ने के लिए मजबूर किया जाए।" (गोदान, पृ.47)

ऊपरी सुधारों से किसानों का भला नहीं हो सकता क्योंकि सरकारी तंत्र के साथ ज़मींदारों के संबंध बहुत गहरे थे, इसलिए तंत्र के साथ पूरी व्यवस्था को बदलने की जरूरत थी। कानून बना देने भर से गरीब किसानों, दलितों, मजदूरों को न्याय मिलने की आशा नहीं बंधती थी, न्याय, कचहरी और अदालत तो पैसे वालों के ही हाथों में खेल रही थी। अंग्रेजों के साथ मिलकर भारतीय सामंत, ज़मींदार, छोटे-छोटे रियासतों के नवाब राज्य का नियंत्रण और नितियों का निर्धारण कर रहे थे। किसानों का सीधा संघर्ष अंग्रेज सरकार, सामन्त, ज़मींदार, अफसर और महाजनों से था। ये सभी गोलबंद होकर अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए एक-दूसरे का साथ देते हुए किसानों का शोषण कर रहे थे। हम देख रहे हैं कि 'गोदान' में किसान और ज़मींदारों के बीच संघर्ष का कोई संकेत नहीं मिलता। किसान जीवन पर ज़मींदारों और महाजनों का अधिकार है, उसके सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक अधिकारों का निर्धारण भी इन्हीं के द्वारा किया जाता है। ज़मींदार और उसके कारिंदे किसान जीवन के नियामक बने हुए हैं। फिर किसान इस शोषण के विरोध में विद्रोह कैसे करेगा? करने की सोच भी नहीं सकता है। मानवीय अस्तित्व की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए किसान सर्वथा इन्हीं शोषकों की मर्जी पर निर्भर है। 'गाय' की अभिलाषा रखने वाला होरी अपनी इच्छा पूरी नहीं कर पाता। यह समाज का वही वंचित तबका है जो भारतीय जाति व्यवस्था के अंतर्गत निम्न जातियों में शामिल है। जाति के आधार पर इनका सामाजिक दर्जा तय है बल्कि व्यवसाय तथा उत्पादन के साधनों के साथ इनका संबंध भी तय है। उत्पादन प्रणाली में इनके हिस्से में केवल श्रम ही आया है। इनके परिश्रम से उत्पन्न उत्पाद पर जातिव्यवस्था में श्रेष्ठ मानी गई जातियों का ही अधिकार है। इन तथाकथित उच्च जातियों का काम केवल भोग करना है, श्रम न करके भी जीवन के सभी सुख इनके समक्ष हाथ जोड़कर खड़े है। यह उस जातिव्यवस्था का कमाल है, जो जन्म के आधार पर निश्चित होती है। केवल कुछ व्यक्तियों के लिए संपूर्ण बहुजन और सर्वहारा को या तो मजदूर बन कर जीना पड़ रहा है या सेवा करने वाला गुलाम। उत्पादन के सभी संसाधनों और श्रम पर भी इन्हीं उच्च कही गई जातियों का एकाधिकार है, इस एकाधिकार को बनाए रखने के लिए समय-समय पर ये दमनकारी तरीके अपनाते रहते हैं, जिससे किसान और मजदूरों पर इनका दबाव बना रहे। किसान और मजदूरों के श्रम का मूल्य उनकी शर्तों पर नहीं बल्कि ज़मींदारों, साहुकारों, अधिकारियों की शर्तों के अनुसार तय होता है, जो कभी भी उसके आर्थिक स्तर से ऊपर उठने में मदद नहीं करती। बल्कि होरी तो किसान से मजदूर बनने के लिए मजबूर हो गया है। थोड़ी सी जमीन जो उसे व उसके परिवार के लिए जान से भी प्यारी थी, उस जमीन को बचाने में वह असमर्थ हो जाता है। दरवाजे पर गाय का बंधा होना एक किसान के लिए जीवन भर की पूँजी है, एक सपना है लेकिन होरी का गाय खरीद ने का सपना अंत तक पूरा नहीं हुआ, गाय की आकांक्षा मन में लिए ही होरी मर जाता है।

'गोदान' में होरी की गाय खरीदने की आकांक्षा का पूर्ण न होना, केवल वैयक्तिक आकांक्षा के संदर्भ में अभिव्यक्त नहीं हुआ है। यहाँ प्रेमचंद भारतीय किसानों की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वास्तविकता को उजागर करना चाहते थे। इस वास्तविकता में छिपे उस सत्य से तत्कालीन समाज और संवेदनशील पाठक वर्ग को परिचित करवाना चाहते थे। सामन्तवाद के अंत और पूंजीवाद के उद्भव की उन स्थितियों से अवगत

कराना चाह रहे थे, वे किसान और ज़मींदार, कृषक सभ्यता के दोनों स्तंभों के धराशायी होने से चिंतित थे। बदलते आर्थिक संदर्भों में गरीब किसान या मजदूर की आर्थिक स्थिति में कोई बदलाव आने का संकेत नहीं मिलता है।

आर्थिक अधिकार चाहे ज़मींदारों के हाथ में रहे, चाहे पूँजीपतियों के हाथ में हो, किसान और मजदूर की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होगा। जब तक किसान अपनी सामाजिक स्थिति मजबूत करके आर्थिक उत्पादन में अपनी भागीदारी निश्चित करने के लिए संघर्ष नहीं करता, तब तक होरी जैसी दयनीय स्थिति से बचने का उसके पास दूसरा कोई कारगर उपाय नहीं है।

## 1.9 प्रश्न/अभ्यास

1) 'होरी ' ज़मींदार, महाजन, पुरोहित और अधिकारियों के विरुद्ध संघर्ष न करके, हमेशा समर्पण व समझौता क्यों करता है?

2) होरी और गोबर की चेतना में दिखाई देने वाले अंतर को रेखांकित कीजिए।

3) 'गोदान ' की गाय होरी की अपूर्ण आकांक्षा का प्रतिरूप है और उपन्यास की कथा को संयोजित भी करती हैं। स्पष्ट कीजिए

4) पूंजीवाद के आगमन से कृषक-सभ्यता नष्ट होगी, इससे प्रेमचंद चिंतित थे।

5) किसान दब्बू, असंगठित व असहाय क्यों है?

# इकाई 2 राष्ट्रीय आंदोलन के संदर्भ में गोदान

**इकाई की रूपरेखा**

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 गोदान में उपस्थित राष्ट्रीय आंदोलन
2.3 किसान जीवन में राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव
2.4 'शहरी' जीवन में राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव
2.5 गोदान में स्वतंत्र भारत की कल्पना
2.6 'गोदान' और प्रेमचंद की जनतांत्रिक दृष्टि
2.7 सारांश
2.8 प्रश्न/अभ्यास

## 2.0 उद्देश्य

हिंदी उपन्यास एवं कहानी-3 की यह दूसरी इकाई है। आपने इससे पहले की इकाई 'किसान के परिप्रेक्ष्य में गोदान' में भारतीय किसानों के सामूहिक दुख-दर्द, आर्थिक-सामाजिक शोषण की निरंतर प्रक्रिया और किसान से मजदूर बनने की विवशता के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त की है। इस इकाई में आप -

- 'गोदान' में अभिव्यक्त राष्ट्रीय आंदोलन के आधार पर प्रेमचन्द के आजाद भारत की परिकल्पना को समझ सकेंगे,
- किसान जीवन की कथा में राष्ट्रीय आन्दोलन की उपस्थिति और उसके प्रभाव को जान सकेंगे,
- शहरी जीवन की कथा में राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रभाव को रेखांकित कर सकेंगे,
- प्रेमचंद का राष्ट्रीय आन्दोलन के संबंध में जनतांत्रिक दृष्टिकोण क्या था? इसका विश्लेषण कर करेंगे,

## 2.1 प्रस्तावना

प्रेमचंद मूलतः किसानों के लेखक है। उन्होंने अपनी रचनाओं में किसान जीवन के विविध पक्षों का चित्रण किया है। पिछली इकाई में हमने भारतीय किसानों के सामुहिक दुख दर्द, शोषण और त्रासद जीवन पर विचार किया। ज़मींदार, महाजन और नौकरशाही की दमनकारी व्यवस्था से प्रताड़ित किसान का अंततः किसान से मजूदर बनने पर विवश हो जाना, शोषण के लंबे दौर से गुजरते रहने के बाद भी शोषको के विरोध में आवाज न उठाना, हमें अंतर्मुख कर देता है। इस इकाई में हम मुख्यतः 'गोदान' में राष्ट्रीय आन्दोलन की उपस्थिति से किसान जीवन और शहरी जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है और विशेष रूप से लेखक की जनतांत्रिक दृष्टि से 'गोदान' के वस्तुविधान में जो परिवर्तन हुए है, उन पर विचार करेंगे।

प्रेमचंद राष्ट्रीय आन्दोलन के दौर के लेखक हैं। उनके लेखन की शुरुआत स्वदेशी आन्दोलन (1905) के दौरान हुई। आगे चलकर हिन्दी भाषी प्रान्तों में व्यापक रूप से फैले हुए असहयोग आन्दोलन (1921ई.) और सत्याग्रह आन्दोलन (1930ई.) के दिनों में

वे सक्रीय रूप से साहित्य-सर्जन में रत रहे। असहयोग आन्दोलन के प्रभाव से उन्होंने सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दिया तथा 'सत्याग्रह आन्दोलन' के दिनों में इस आन्दोलन के समर्थन में 'हंस' और 'जागरण' नामक पत्र निकाले। 'हंस' के लिए यह परम सौभाग्य की बात है कि उसका जन्म ऐसे शुभ अवसर पर हुआ है, जब भारत में एक नये युग का आगमन हो रहा है, जब भारत पराधीनता की बेड़ियों से निकलने के लिए तड़पने लगा है। इस तिथि की यादगार एक दिन देश में कोई विशाल रूप धारण करेगी। प्रसंगवश यहाँ उल्लेखनीय है कि 26 जनवरी को मनाया जाने वाला गणतंत्र दिवस उसी यादगार के रूप में मनाया जाता है। 'हंस' और 'जागरण' में प्रेमचन्द ने राष्ट्रीय आन्दोलन के समर्थन में अनेक टिप्पणियाँ, लेख एवं संपादकीय लिखे, जिसके कारण ये पत्र सरकार के कोपभाजन बने तथा उन्हें बार -बार जमानत देनी पड़ी।

इसके अलावा प्रेमचन्द ने 'समर-यात्रा' 'शराब की दुकान' 'मैकू' आदि कहानियों में इस आन्दोलन के विभिन्न पहलुओं को उजागर करने वाली कहानियाँ लिखी। इस बीच जून 1934 में सत्याग्रह आन्दोलन बन्द कर दिया गया तथा नयी कौंसिलों के गठन की बातें होने लगी। प्रेमचन्द एक सजग पत्रकार एवं सर्जनशील लेखक के रूप में इन पूरी परिस्थितियों पर नजर रखे हुए थे। बावजूद राष्ट्रीय आन्दोलन के कोई स्पष्ट प्रसंग नहीं मिलता आखिर ऐसा क्यों है? क्या राष्ट्रीय आन्दोलन का कोई प्रभाव इस उपन्यास पर नहीं है?

## 2.2 गोदान में उपस्थित राष्ट्रीय आन्दोलन

'गोदान' का ध्यान पूर्वक अध्ययन करने पर पता चलता है कि इसमें होरी कभी आन्दोलित नहीं होता। वह किसानों की कुशल 'दबे रहने' में मानता है। 'रायसाहब को क्या दोस दें? भाग्य का खेल है' ऐसा सोचकर वह शांत रहता है। ऐसा नहीं है कि प्रेमचन्द ने कभी सक्रिय आन्दोलन का चित्रण किया हो? या उनके पात्र आन्दोलित न होते हों। 'रंगभूमि' में अंधे सूरदास के लिए जनता आन्दोलन पर उतर जाती है। प्रेमचन्द उस आन्दोलन का समर्थन करते हैं। 'कर्मभूमि' में तो लगान बन्दी आन्दोलन को पर्याप्त विस्तार से चित्रित किया है। तब प्रेमचंद ने 'गोदान' में होरी को इतना दब्बू, डरपोक और समझौता परस्त कयों दिखाया है? प्रेमचंद साहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों ने इस सवाल को उठाया है।

डॉ. नामवरसिंह ने लिखा है। "'प्रेमाश्रम' के बलराज और मनोहर जैसे किसानों को उन्होंने बहुत अधिक विद्रोही दिखाया था, लेकिन होरी को उन्होंने संतोष, धैर्य, सहनशीलता तथा अन्ध विश्वास का पुंज दिखलाया। जो भारतीय किसानों की जातीय विशेषता है। यदि किसान-आन्दोलन की ओर ध्यान दें तो 'प्रेमाश्रम' के सत्रह-अठारह वर्षों के बाद लिखे हुए 'गोदान' में किसान काफी सन्तोषी, भाग्यवादी और धैर्यवान रहा है। अपने अनुभवों से प्रेमचन्द ने इस तथ्य को अन्त में समझा और होरी के रूप में उन्होंने ऐसे ही किसान का चित्रण किया जो तमाम किसानों का प्रतिनिधि हों सका।" (आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ पृ. 144 ले.डॉ. नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1968)

जहाँ तक व्यक्ति का प्रश्न है होरी कायर नहीं है। रायसाहब की दावत में वही अकेला होता है जो पठान बने हुए मेहता की बन्दूक से घबराता नहीं और उससे भिड़ जाता है। यूँ थानेदार के सामने जाते हुए घबराता है, कारिंदा,महाजन, पंचो का आदेश मान लेता है। वैसे ध्यान से देखने पर पता चलता है कि एक पात्र के रूप में होरी अधूरा पात्र है।

वह उपन्यास में कभी अकेला नहीं आता। उसके आगे-पीछे हमेशा धनिया रहती है और वह हर मुद्दे पर अपनी राय देने से बाज नहीं आती। अक्सर होरी धनिया से तर्क में परास्त हो जाता है। उसकी डाँट-फटकार खाकर चुप हो जाता है। वह तो धनिया से मिलकर ही सम्पूर्ण चरित्र बनता है। यदि धनिया की तुलना मनोहर से की जाय तो उसके सामने मनोहर धीमा पात्र ही लगेगा। (प्रेमचंद और भारतीय किसान पृ. 276-277)

इसके बावजूद यह तय है कि प्रेमचन्द ने 'गोदान में किसानों की आन्दोलन धर्मी चेतना का वर्णन नहीं किया है, वरन् उनकी बदहालीका बयान किया है। वे 'गोदान' में किसानों का आह्वान नहीं करते, उन्हें प्रेरित नहीं करते कि वे उठकर इस व्यवस्था का अंत कर दें; वरन् वे शिक्षित मध्यवर्ग को उत्साहित करते हैं। 'गोदान' शिक्षित वर्ग को सम्बोधित है, इसमें उनकी न्याय-चेतना को उकसाने का प्रयास किया गया है ताकि यह वर्ग किसानों की हित-चिंता के लिये संगठित प्रयास करे। प्रेमचंद को यह विश्वास हो गया था कि आधुनिक शिक्षित बुद्धिजीवियों की सक्रियता के बिना किसान स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान नहीं कर सकते। इसलिये उन्होंने किसानों के ओज का वर्णन न कर उनकी असहनीय पीड़ा का चित्रण किया है।

## 2.3 किसान जीवन में राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव

जहाँ तक राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रश्न है, होरी को इस आन्दोलन की कोई जानकारी नहीं है। गोबर अवश्य शहर में जाकर राजनीतिक एवं कानूनी रूप से परिचित हो गया है। गोबर के व्यक्तित्व पर टिप्पणी करते हुए प्रेमचन्द ने लिखा - ''सभाओं में आने-जाने से उसे कुछ-कुछ राजनीतिक ज्ञान भी हो चला है। राष्ट्र और वर्ग का अर्थ समझने लगा है। सामाजिक रूढियों की प्रतिष्ठा और लोक-निन्दा का भय अब उसमें बहुत कम रह गया है। आये दिन पंचायतों ने उसे निस्संकोच बना दिया है। जिस बात के पीछे वह यहाँ घर से दूर, मुँह छिपाए पड़ा हुआ है, उसी तरह थी, बल्कि उससे भी कहीं निन्दास्पद बातें यहाँ नित्य हुआ करती और कोई भागता नहीं।'' (गोदान पृ.168) इसी तरह से होली के अवसर पर गोबर जब गाँव में आता है तथा मुखियों का मखौल उड़ाता है, तब होरी सोचता है- ''लड़के की अकल जैसे खुल गई है। कैसी बेलाग बात कहता है।'' (वही,पृ.178) मुखियों को 'हत्यारे' बताते हुए धनिया उन पर टिप्पणी करती है - ''उस पर सुराज चाहिए। जेल जाने से सुराज न मिलेगा। सुराज मिलेगा धर्म से, न्याय से।'' (वही, पृ. 97) हाँ, धनिया एक बार सुराज का जिक्र करती है, शेष किसी ग्रामीण पात्र ने कभी भी सुराज या राष्ट्रीय आन्दोलन का कहीं कोई जिक्र नहीं किया। धनिया द्वारा किया गया यह जिक्र भी धनिया का अपना नहीं लगता, वरन् ऐसा लगता है मानो लेखक स्वयं धनिया के मुँह से बोल रहा है। इन टिप्पणियों के अलावा ग्रामीण जीवन में किसान पात्रों की बातचीत में राष्ट्रीय आन्दोलन का कोई प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता। दो-एक स्थानों पर अप्रत्यक्ष उल्लेख अवश्य मिलता है।

उपन्यास के आरम्भिक हिस्से में रायसाहब का परिचय देते हुए प्रेमचन्द ने लिखा, ''पिछले सत्याग्रह-संग्राम में रायसाहब ने बड़ा यश कमाया था। कौंसिल की मेम्बरी छोड़कर जेल चले गये थे। तब से उनके इलाके के असामियों को उनसे बड़ी श्रद्धा हो गयी थी।'' 'यह वक्तव्य भी लेखक का ही है। इसके द्वारा भी प्रेमचंद रायसाहब के व्यक्तित्व को रेखांकित करना चाहते है। इससे किसानों की राजनीतिक जागरूकता का कोई सम्बन्ध नहीं ; क्योंकि किसी किसान ने कभी भी इस 'श्रद्धा' को अभिव्यक्त नहीं किया - न अकेले में, न सामूहिक बातचीत में।

इसलिये जहाँ तक किसानों के जीवन का प्रश्न है, प्रेमचंद ने राष्ट्रीय आन्दोलन का कहीं कोई उल्लेख नहीं किया। यह अवश्य है कि ज्यों ही उपन्यास में पढ़े लिखे शहरी-सम्भ्रांत पात्र आते है, चाहे वे जनता के हितैषी मेहता हो, चाहे खन्ना या रायसाहब वे सभी राष्ट्रीय आन्दोलन के संदर्भ में बातचीत करते हैं। इससे एक निष्कर्ष तो निकलता ही है कि प्रेमचंद की दृष्टि में राष्ट्रीय आंदोलन अभी तक शहरी मध्यवर्ग, पूँजीपति, ज़मींदार समुदाय तक सीमित है। शहर के निम्नमध्यवर्गीय लोग और मजदूरों तक में थोड़ी बहुत जाग्रति आ गयी हो, परन्तु विशाल किसान वर्ग से यह आन्दोलन अभी तक दूर है।

## 2.4 शहरी जीवन में राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रभाव

इस दृष्टि से शहरी पात्रों का जीवन-क्रम देखें तो हम पाते हैं कि लगभग सभी पात्र इस आन्दोलन से परिचित है। स्वयं रायसाहब जेल चले ही गये थे। यह अलग बात है कि ''रायसाहब राष्ट्रवादी होने पर भी हुक्काम से मेल-जोल बनाए रखते थे। उनकी नजरें और डालियाँ और कर्मचारियों की दस्तूरियाँ जैसी चली आती थीं।'' (गोदान, पृ.13)

इसी तरह ''मिस्टर खन्ना भी साहसी आदमी थे,संग्राम में आगे बढ़ने वाले एक-दो बार जेल हो आए थे। किसी से दबना न जानते थे। खद्दर न पहनते थे और फ्रांस की शराब पीते थे। अवसर पड़ने पर बड़ी-बड़ी तकलीफें झेल सकते थे। जेल में शराब छुई तक नहीं, और ए. क्लास में रहकर भी सी. क्लास की रोटियाँ खाते रहे, हालांकि उन्हें हर तरह का आराम मिल सकता था।'' (वही, पृ.75) मिस मालती भी एक बार जेल हो आई थी। मालती एक बार कहती है-'' मैंने केवल एक बार जेल जाने के सिवा और क्या जन-सेवा की है? और सच पूछिए तो उस बार भी मैं अपने मतलब ही से गयी थी, उसी तरह जैसे रायसाहब और खन्ना गये थे।'' (वही, पृ. 167) अभी ''पिछले जलसे में मालती नगर-कांग्रेस-कमेटी की सभानेत्री चुन ली गई है।'' (वही, पृ.75)

इसी तरह राय साहब के भावी दामाद कुँवर दिग्विजयसिंह के बारे में प्रेमचन्द ने लिखा- ''कुँवर साहब दुर्वासनाओं के भण्डार थे। शराब, गाँजा, अफीम, मदक, चरस, ऐसा कोई नशा न था, जो वह न करते हों। और ऐयाशी तो रईस की शोभा है।'' परन्तु वैसे बड़े ''दबंग और निर्भीक थे। राष्ट्रीय आन्दोलन में दिल खोलकर सहयोग देते थे; गुप्त रूप से। अधिकारियों से यह बात छिपी न थी,फिर भी उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी और साल में एक-दो बार गवर्नर साहब भी उनके मेहमान हो जाते थे।'' (वही, पृ.191-192)

हाँ, यह अवश्य था कि इनमें से कुछ पात्र क्रांग्रेस को सहयोग देने के लिए पछताते हुए भी दिखायी देते हैं। कभी वे जेल जाने का गौरव गान गाते हैं तो कभी अपनी इस मूर्खता के लिए अपने आपको कोसते हैं। एक बार रायसाहब बोले- ''सत्याग्रह आन्दोलन छिड़ा। मेरे सारे भाई शराब-कबाब में मस्त थे। मैं अपने को रोक न सका। जेल गया और लाखों रूपये की जेरबारी हुई और अभी तक उसका तावान दे रहा हूँ। मुझे उसका पछतावा नहीं है। बिलकुल नहीं।'' (वही, पृ.75) यही रायसाहब एक बार पछताते हुए कहते हैं - ''कांग्रेस में शरीक हुआ, उसका तावान अभी तक देता जाता हूँ। काली किताब में नाम दर्ज हो गया।'' (वही, पृ.145-146) यह पछतावा अंततः उनको अंग्रेज राज का भक्त बना देता है। प्रेमचन्द बहुत मीठी चुटकी लेते हुए इस प्रकरण का वर्णन करते है। प्रेमचन्द ने लिखा कि रायसाहब का सितारा 'बुलन्द' है। ''सबसे बड़े सौभाग्य की बात यह थी कि अबकी हिज मैजेस्टी के जन्म दिन के अवसर पर उन्हें राजा की पदवी भी मिल गई। अब उनकी महत्वाकांक्षा सम्पूर्ण रूप से संतुष्ट हो गई। उस दिन

खूब जशन मनाया गया और इतनी शानदार दावत हुई कि पिछले सारे रिकार्ड टूट गए। जिस वक्त हिज एक्सेलेन्सी गवर्नर ने उन्हें पदवी प्रदान की, गर्व के साथ राज-भक्ति की ऐसी तरंग उनके मन में उठी कि उनका एक-एक रोम उससे प्लावित हो उठा। यह है जीवन! नहीं विद्रोहियों के फेर में पड़कर व्यर्थ बदनामी ली, जेल गए, अफसरों की नजरों में गिर गए। जिस डी.एस.पी. ने उन्हें पिछली बार गिरफ्तार किया था, इस वक्त वह उनके सामने हाथ बाँधे खड़ा था और शायद अपने अपराध के लिए क्षमा माँग रहा था।'' (वही, पृ.262)

उपर्युक्त सभी प्रसंगों से ऐसा लगता है कि प्रेमचन्द राष्ट्रीय आन्दोलन के तत्कालीन रूप से कुछ-कुछ असहमत होने लगे थे। इसलिए इस आन्दोलन के प्रति वैसा उल्लास और उत्साह का भाव 'गोदान' में नहीं मिलता, जैसा उनकी पूर्ववर्ती रचनाओं में मिलता है। ' हंस' और ' जागरण' की कई टिप्पणियों में भी प्रेमचन्द ने आन्दोलन की कमियों की ओर इशारा किया है। इसी कारण 'गोदान' में भी रायसाहब के घर शराब की दावत होती है, प्रेमचन्द उस पर कोई एतराज नहीं करते। मिस मालती पं. ओंकारनाथ के खान-पान की पवित्रता को छुड़ाकर, उन्हें बहला-फुसलाकर जब शराब का जाम पिलाने में सफल हो जाती है तो ''जैसे पिटारे में बन्द कहकहे निकल पड़े'' हों। इस अवसर पर जो टिप्पणी होती है वह भी द्रष्टव्य है- ''तोड़ दिया, नमक का कानून तोड़ दिया, नेम का घड़ा फोड़ दिया।'' (वही, पृ.59)

यही नही, शिकार-पार्टी के दौरान मिर्जा खुर्शेद सारे गांव को शराब पिलाकर मस्त कर देते हैं, और प्रेमचन्द लेखक के रूप में इस पर कोई एतराज नही करते।

28 जून 1933 के जागरण में प्रेमचन्द ने सत्याग्रह आन्दोलन का मूल्यांकन इस तरह से किया है - ''सत्याग्रह आन्दोलन क्रांति असफल हो गयी।'' (विविध प्रसंग भाग 3 पृ. 180 सं.अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962) राष्ट्रीय आन्दोलन में लक्ष्मीपतियों की निर्णायक भूमिका को रेखांकित करते हुए मेहता कहते हैं- ''लक्ष्मीपतियों की बदौलत ही हमारी बड़ी-बड़ी संस्थाएँ चलती हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन को दो-तीन साल तक किसने इतनी धूमधाम से चलाया। इतनी धर्मशालाएँ और पाठशालाएँ कौन बनवा रहा है। आज संसार का शासन सूत्र बैंकरों के हाथ में है। सरकार उनके हाथ का खिलौना है।'' (गोदान, पृ.199) इस आन्दोलन का जो प्रभाव होना था, वह हो चुका। पिकेटिंग का अब कोई असर नहीं हो सकता क्योंकि विलायती कपड़े बेचने वालों का नया बाजार खुल गया है। सरकारी नौकरियाँ हम छोड़ नहीं सकते क्योंकि हमारे भाई-भतीजे सरकारी नौकर हैं और वे हमारे बाल-बच्चों का पालन-पोषण करते हैं। लगान बन्दी व करबन्दी का भी असर नहीं हो सकता। यहाँ तक कि 'नमक' का ड्रामा भी खेला जा चुका और उसे सरकार की बेवकूफी से जो सफलता मिल गयी, उसकी अब आशा नहीं की जा सकती। इसलिए प्रेमचन्द का मत बना कि कांग्रेस अब कौंसिलों में जाये और रचनात्मक कार्य करे। यह सही है कि वैध आन्दोलन का देश को बड़ा कड़ुआ अनुभव रहा है, फिर भी अब उसके सिवा और कोई चारा नहीं है। इसलिए जून 1934 में जब कांग्रेस ने सत्याग्रह आन्दोलन वापिस लिया तो प्रेमचन्द ने उसका समर्थन किया। गौर तलब है कि इसके बाद ही प्रेमचन्द ने 'गोदान' लिखना आरंभ किया। इसलिए 'गोदान' के जेल जा चुके कार्यकर्त्ता अब कौंसिलों में जाने या न जाने के बारे में विचार करने लगे थे।

सभी बुद्धिजीवी पात्र किसी न किसी रूप में कौंसिल की गतिविधियों की चर्चा करते हुए दिखाये गये हैं। मि. तंरवा मालती को कौंसिल में जाने की, चुनाव लड़ने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं

''मेरी इच्छा केवल यह है कि कौंसिलों में ऐसे लोग जायँ, जिन्होंने जीवन में कुछ अनुभव प्राप्त किया हे और जनता की कुछ सेवा की है। जिस महिला ने भोग विलास के सिवा कुछ जाना ही नहीं, जिसने जनता को हमेशा अपनी कार का पेट्रोल समझा, जिसकी सबसे मुल्यवान सेवा वे पार्टियाँ है, जो वह गवर्नरों और सेक्रेटरियों को दिया करती है, उनके लिए इस कौंसिल में स्थान नहीं है। नई कौंसिल में बहत कुछ अधिकार प्रतिनिधियों के हाथ में होगा और मैं नहीं चाहता कि वह अधिकार अनधिकारियों के हाथ में जाय।'' (वही, पृ. 120) इसी तरह तंखा रायसाहब से कहते है ''अबकी तो आपने कौंसिल में प्रश्नों की धूम मचा दी। मै तो दावे के साथ कह सकता हूँ कि किसी मेम्बर का रिकार्ड इतना शानदार नहीं है।'' (वहीं, पृ. 46( परन्तु मालती का मत है कि ''जिस तरह के कौंसिल बन रहे हैं, उनके लिए रानी साहब ही ज्यादा उपयुक्त हैं।'' मिर्जा खुर्शेद टिप्पणी करते हैं - ''मेरा बस चले, तो कौंसिल में आग लगा दूँ। जिसे हम डिमॉक्रेसी कहते हैं, वह व्यवहार में बड़े-बड़े पूँजीपतियों और ज़मींदारों का राज्य है और कुछ नहीं। चुनाव में वही बाजी ले जाता है, जिसके पास रूपए हैं। रूपए के जोर से उसके लिए सभी सुविधाएँ तैयार हो जाती हैं। बड़े-बड़े लिखने और बोलने वाले, जो अपनी जबान और कलम से पब्लिक को जिस तरफ चाहें फेर दें, सभी सोने के देवता के पैरों पर माथा रगड़ते हैं। मैंने तो इरादा कर लिया है। अब इलेक्शन के पास न जाऊँगा। मेरा प्रोपेगंडा अब डेमॉक्रेसी के खिलाफ होगा।'' (वही, पृ.80)

इन कौंसिलों की चुनावी हलचल से एक नये ढंग के राजनीतिक कार्यकर्ता का उदय हुआ है। प्रेमचन्द की सूक्ष्मदृष्टि से वह ओझल नहीं हुआ है,, वह है असफल वकील मि. श्याम बिहारी लेखा, जो बीमा कम्पनी की दलाली करते हैं तथा ''ताल्लुकेदारों को महाजनों और बैंकों से कर्ज'' दिलाते हैं। चुनाव की उठापठक और उसकी गणित के ये अच्छे जानकार हैं। ''खासकर चुनाव के समय उनकी तकदीर चमकती थी। किसी पोढ़े उम्मीदवार को खड़ा करते, दिलोजान से उसका काम करते और दस-बीस हजार बना लेते। जब कांग्रेस का जोर था, तो कांग्रेस के उम्मीदावारों के सहायक थे। जब साम्प्रदायिक दल का जोर हुआ, तो हिन्दू सभा की ओर से काम करने लगे ; मगर इस उलटफेंर के समर्थन के लिए उनके पास ऐसी दलीलें थीं कि कोई उँगली न दिखा सकता था।'' (वही, पृ.80)

## 2.5 गोदान में स्वतंत्र भारत की कल्पना

'गोदान' की कथावस्तु में प्रेमचंद ने राष्ट्रीय आंदोलन का वर्णन नहीं किया है, तब भी रचनाकार की जीवन दृष्टि पर आंदोलन का प्रभाव होने के कारण गोदान की कथावस्तु की परिधि का निर्धारण राष्ट्रीय आंदोलन के द्वारा हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं है। जाहिर है कि 'गोदान' की रचना राष्ट्रीय आंदोलन के अंतिम उद्देश्य - स्वतंत्र भारत की स्थापना के अनुरूप हुई है।

'गोदान' में प्रेमचंद ने किसी यूटोपिया की, किसी प्रकार के आदर्श समाज या राज्य की परिकल्पना प्रस्तुत नहीं की है। ' सेवासदन' और ' प्रेमाश्रम' की आश्रमवादी आदर्श चेतना का 'गोदान' में नितांत अभाव है। सुनहरे भविष्य की आशामयी दृष्टि रचना के यथार्थ को खंडित करती है। यह मानकर प्रेमचंद ने यथार्थवादी रचना-पद्धति के अनुरूप 'गोदान' का सर्जन किया है। यही 'गोदान' की शक्ति है। इसमें लेखक ने होरी-धनिया के जीवन की करुण कहानी पर अपनी दृष्टि केंद्रित रखी है। इसके साथ ही तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन की प्रगति के बारे में भी लेखक आलोचनात्मक दृष्टि से विचार करता हुआ दिखायी देता है।

किसी भी आदर्श आकांक्षा के अभाव के बावजूद प्रेमचंद ने अपनी रचना का परिप्रेक्ष्य स्पष्ट किया है। वे दृष्टि विहीन यथातथ्यवादी लेखक नहीं है। उनके कथा चयन में, चरित्रों के मूल्य निर्णय में, संवाद में, घटनाओं के विकास-क्रम में लेखक की जीवन दृष्टि सक्रिय रहती है। इनके माध्यम से हम 'गोदान' की कथा के न कहे गये अंश को परिभाषित कर सकते हैं। 'गोदान' की कथा का यह अनकहा हिस्सा 'गोदान' के प्रस्तुत कथा देश को निश्चित आकार देता है।

इस दृष्टि से यदि हम 'गोदान' की कथा को पुनः नियोजित करें, कथा के निष्कर्षों को संगत निष्कर्षों तक ले जाये तो हम उसमें ' स्वतंत्र भारत' की एक धुंधली-सी तस्वीर अवश्य बना सकते हैं। इस तस्वीर में प्रेमचंद की निश्चित भविष्यवाणियाँ, कुछ आशंकाएँ हैं, कुछ चेतावनियाँ हैं, कुछ अंदेशा है, कुछ चिंताएं हैं जो अलग-अलग प्रकरणों में देखने को मिलती है।

'गोदान' को पढ़ते हुए सर्वप्रथम निश्चित भविष्यवाणी दिखायी देती है वह यह है कि किसी भी हालत में स्वतंत्र भारत में ज़मींदारी व्यवस्था नहीं रह सकती है। ज़मींदारों का लोप अनिवार्य है। इसे प्रेमचंद ने अनेक घटनाओं-प्रकरणों-उदाहरणों एवं चर्चाओं में अटल सत्य के रूप में उद्घाटित किया है। रायसाहब एकाधिक बार इसका जिक्र करते हैं। राय साहब स्वीकार करते हैं - ''बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है।'' (गोदान पृ.15( राय साहब सजग पात्र है, परंतु वे असामियों को लूटने के लिए ''मजबूर हैं। अगर अफसरों को कीमती-कीमती डालियाँ न दें, तो बागी समझे जाएँ।'' (वही पृ. 47) वैंकट खन्ना उन्हें आगाह करते हुए कहता है, ''यौ समझ लीजिए कि आप ज्वालामुखी के मुख पर खड़े हैं। एक हल्की सी ठोकर आपको पाताल में पहुँचा सकती है।'' (वही, पृ. 195) उनका विलास, उनका कर्जा, उनकी दलाली, उनके अत्याचार और उनकी अनुपयोगिता 'गोदान' में सप्रमाण सिद्ध की हुई है। इसका विश्लेषण हम पिछले अध्यायों में कर चुके हैं।

जब तक ज़मींदारी-व्यवस्था का उन्मूलन नहीं कर दिया जाता, तब तक किसानों का अस्तित्व खतरे में है। यदि ज़मींदारी प्रथा रही तो भारतीय किसान तबाह हो जायेंगे। वे सब के सब खेत मजदूर बन जायेंगे। इसलिए यदि किसानों को बचाए रखना है तो ज़मींदारी-व्यवस्था का उन्मूलन करना ही होगा। यह किसानों के अस्तित्व-रक्षा का प्राथमिक प्रश्न है। इस विषय पर कोई ढुलमुल निर्णय नहीं लिया जा सकता। ज़मींदार-प्रथा के समाप्त होते ही किसानों से वसूल किये जाने वाले गैर-कानूनी कर समाप्त हो जायेंगे। जिनमें डाँड, दस्तूरी, शगुन, बेगारी आदि अनेक कर शामिल है। इसके साथ ही भूमि की लगान को कम करना पड़ेगा। धनिया सोचती है कि ''चाहे कितनी ही कतर ब्योत करो, कितना ही पेट-तन काटो, चाहे एक-एक कौड़ी को दाँत से पकड़ो, मगर लगान बेबाक होना मुश्किल है।'' (वही, पृ.7) किसानों की बदहाली का प्रमुख कारण लगान की यह अधिकता है। इसलिए स्वतंत्र भारत में लगान कम करना निहायत आवश्यक है।

प्रेमचंद संकेत कर देते है कि ज़मींदारी व्यवस्था के समाप्त होते ही ज़मींदार शक्तिहीन नहीं हो जायेंगे। उनकी शोषण करने की शक्ति भले ही समाप्त हो जाये, परंतु उनकी राजनीतिक ताकत तब भी बची रहेगी। कौंसिलों का राजनीतिक अनुभव उन्हें आगे भी लाभ की स्थिति में रखेगा। - इस ओर हलका सा संकेत करके प्रेमचंद आगे बढ़ जाते हैं। इस विवाद में वे शायद नहीं पड़ना चाहते थे।

प्रेमचंद आगाह करते हैं कि मात्र कानून बनाने से किसानों का भला नहीं हो सकता। कानून की अपनी सीमाएँ होती हैं। इसलिए ''सरकार अगर असामियों को रुपये उधार देने का कोई बन्दोबस्त नहीं करेगी'' तो ''इस कानून से कुछ न होगा।''(वही, पृ.205) इसलिए महाजनी शोषण से मुक्ति के लिए स्वतंत्र भारत की सरकार को बैंकों से कम ब्याज पर कर्ज देने की व्यवस्था करनी होगी। 'गोदान' के किसानों की ''कमाई का बड़ा भाग महाजनों का कर्ज चुकाने में खर्च हो जाता है।''(वही, पृ.256)

इसके साथ ही प्रेमचंद किसानों में जागृति फैलाने के काम को भी महत्व देना चाहते हैं। यदि होरी गोबर की तरह सोचता और कार्य करता तो उसको इतनी परेशानियाँ नहीं उठानी पड़ती। न उसे गैर कानूनी सूद देना पड़ता और न बिरादरी को डाँड देनी पड़ती। इस ओर संकेत मात्र करके प्रेमचंद अपनी कथा में रम गये लगते हैं।

## 2.6 'गोदान' और प्रेमचन्द की जनतांत्रिक दृष्टि

'गोदान' की कथा में राष्ट्रीय आन्दोलन के संदर्भ के अभाव का तात्पर्य यह नहीं है कि इस उपन्यास में आन्दोलन की प्रत्यक्ष उपस्थिति न दिखायी दे, परन्तु रचनाकार की जीवन दृष्टि में राष्ट्रीय आन्दोलन का संदर्भ बराबर विद्यमान है। इस दृष्टि से ' गोदान' को पढ़ने पर हमारा ध्यान 'गोदान' की कतिपय विशेषताओं की तरफ गये बिना नहीं रहता। इनमें से सबसे पहली बात तो यह है कि 'गोदान' ब्रिटिश भारत की तत्कालीन व्यवस्था का समर्थक-उपन्यास नहीं है। वह इस व्यवस्था के प्रति तटस्थ और उदासीन भी नहीं है। इसके विपरीत वह इस व्यवस्था का कटु आलोचक हैं। जिस ज़मींदारी प्रथा, प्रशासनिक व्यवस्था,न्याय व कानून की व्यवस्था अंग्रेजी सरकार ने बना रखी थी। 'गोदान' में उसका प्रर्दाफाश किया गया है। इसमें लेखक ने किसी भी स्तर पर, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अंग्रेजी सरकार का समर्थन नहीं किया है। इस दृष्टि से देखा जाए, तो एक पतनोन्मुख वर्ग के सजग पात्र के रूप में कई बार रायसाहब हमारी सहानुभूति ले जाते हैं ; लेकिन कोई भी अधिकारी, पुलिस, गवर्नर, हिज एक्सेलेंसी या उनका प्रतिनिधि कभी लेखक का समर्थन नहीं जुटा पाता।

होरी का शोषण प्रत्यक्ष ज़मींदार और उसके कारिंदे तथा धर्म-समाज के पंच, महाजन आदि करते हुए दिखायी देते हैं। परन्तु प्रेमचन्द को जब भी मौका मिलता है वे शक्तिशाली अंग्रेज बहादुर की उपस्थिति का एहसास करा देते हैं। यदा-कदा सरकार बहादुर का पटवारी पटेश्वरी भी सबको डरा कर चुप करा देता है। रायसाहब भी अधिकारियों को डालियाँ, दस्तूरी आदि देते रहने की चर्चा करते हैं। इस दृष्टि से राष्ट्रीय आन्दोलन से पूर्व लिखे गये उनके उपन्यास 'प्रेमाश्रम' से 'गोदान' की तुलना की जा सकती है। 'प्रेमाश्रम' के लखनपुर में पटेश्वरी नहीं रहता। यह पात्र राष्ट्रीय आन्दोलन की इस समझ से पैदा हुआ है कि भारतीय किसानों की बदहाली का मुख्य कारण अंग्रेजी राज है। 'प्रेमाश्रम' के डिप्टी ज्वालासिंह का न्याय 'गोदान' में नहीं मिलता।

इसके अलावा 'प्रेमाश्रम' का खलनायक ज्ञानशंकर है। प्रेमचंद इस उपन्यास में यही तो व्यक्त करते हैं कि यदि ज्ञानशंकर न रहें, ज़मींदार न रहे, किसानों को सिर्फ. मालगुजारी देनी पडे, तो किसान खुशहाल हो सकते हैं। मायाशंकर का उदार-हृदय लखनपुर को स्वर्ग बना देता है। लखनपुर का ज्ञानशंकर न केवल क्रूर है, वरन् वह सबसे शक्तिशाली भी है। उसके छल प्रपंचों के आगे कोई पात्र नहीं ठहरता। 'प्रेमाश्रम' के लेखन के बाद असहयोग आन्दोलन और सत्याग्रह आन्दोलन हुआ। प्रेमचंद की दृष्टि में यह बात आयी कि ज़मींदारों की क्रूरता एक शक्तिशाली वर्ग का शिकंजा नहीं है

वरन् एक पतनोन्मुख वर्ग द्वारा किया गया अत्याचार है। इनकी खुद की हालत बहुत दयनीय है। 'गोदान' के रायसाहब स्वीकार करते हैं कि बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है।'' (वही, पृ.15) खन्ना एक बार रायसाहब को आगाह करते हुए कहता है, ''यों समझ लीजिए कि आप ज्वालामुखी के मुख पर खड़े हैं। एक हल्की सी ठोकर आपको पाताल में पहुचा सकती है। आपको इस मौके पर बहुत सँभलकर चलना चाहिए।''(वही, पृ.195) रायसाहब स्वयं जानते हैं, अपनी स्थिति से परिचित हैं, लेकिन वे क्या करें? उनकी समझ में कुछ नहीं आता। वे कहते हैं - ''हम अपने असामियों को लूटने के लिए मजबूर हैं। अगर अफसरों को कीमती-कीमती डालियाँ न दें, तो बागी समझे जाएँ, शान से न रहें, तो कंजूस कहलाएँ। प्रगति की जरा सी आहट पाते ही हम काँप उठते हैं और अफसरों के पास फरियाद लेकर दौड़ते हैं कि हमारी रक्षा कीजिए। हमें अपने ऊपर विश्वास नहीं रहा, न पुरूषार्थ ही रह गया। बस,हमारी दशा उन बच्चों की सी है, जिन्हें चम्मच से दूध पिलाकर पाला जाता है, बाहर से मोटे, अन्दर से दुर्बल, सत्वहीन और मोहताज।'' (वही, पृ.47)

प्रेमचंद मानते है कि ऋण ज़मींदारों की शोभा है। इसलिए ' गोदान' मे कोई ऐसा ज़मींदार या ताल्लुकेदार या राजा नहीं है जिस पर ऋण का बोझ न हो। रायसाहब तो ऋण के बोझ से दबे हुए हैं ही, कुँवर दिग्वजय सिंह, राजा सूर्यप्रतापसिंह सभी पर भारी कर्जा है। रायसाहब की ससुराल की जायदाद, जो उनके पुत्र को मिलने वाली है ''उस जायदाद पर दस लाख'' के लगभग ऋण है। स्वयं रायसाहब जब देखो तब खन्ना के पास रूपये उधार लेने के लिए दौड़ते रहते हैं और यह तो तब है जब रायसाहब पर लगभग दस लाख रूपये का कर्ज है। प्रेमचंद ने उनकी आर्थिक दुरवस्था का भी विस्तृत वर्णन किया है। ''इधर कुछ दिनों से रायसाहब की कन्या के विवाह की बातचीत हो रही थी। उसके साथ ही इलेक्शन भी सिर पर आ पहुँचा था, मगर इन सबों से आवश्यक उन्हें दीवानी में एक मुकदमा दायर करना था, जिसकी कोर्ट-फीस ही पचास हजार होती थी, ऊपर के खर्च।.....मुश्किल यही थी कि यह तीनों काम एक साथ आ पड़े थे और उन्हें किसी तरह टाला न जा सकता था। कन्या की अवस्था 18 वर्ष की हो गई थी और केवल हाथ में रूपये न रहने के कारण अब तक उसका विवाह टलता जाता था। खर्च का अनुमान एक लाख का था। जिसके पास जाते, वही बड़ा-सा मुँह खोलता....'' (वही, पृ.191)

प्रेमचंद ने होरी और रायसाहब दोनों को कर्ज के बोझ में डूबे हुए दिखाया है और दोनों महाजनों के सामने चिरौरी करते दिखायी देते हैं। रायसाहब खन्ना के आगे-पीछे इसी कारण घूमते हैं। रूपयों की कमी के कारण वे एक बार मि. तंखा तथा एक बार मि. ओंकारनाथ की भी मिन्नतें कर चुके हैं। यदि ज़मींदारों के शोषण का स्वायत्त सामंती शोषण होता तो रायसाहब को यूँ दर-दर की ठोकरें खाने न जाना पड़ता। परन्तु करें क्या? वे भी अंग्रेजी राज के शोषण के शिकार हैं। इसलिए वे हारते हैं तो भी हारते हैं और जीतते हैं तो भी हारते हैं। जिन तीन कार्यो की उन्होंने ठानी वे पूरे हो गये। प्रेमचंद ने लिखा - ''रायसाहब का सितारा बुलंद था। उनके तीनों मंसूबे पूरे हो गए थे। कन्या की शादी धूमधाम से हो गई थी, होम मेम्बर भी हो गए थे। चारों ओर से बधाइयाँ मिल रही थीं। तारों का ताँता लगा हुआ था। इस मुकदमें को जीतकर उन्होंने ताल्लुकेदारों की प्रथम श्रेणी में स्थान प्राप्त कर लिया था। सम्मान तो उनका पहले भी किसी से कम न था; मगर अब तो उसकी जड़ और भी गहरी और मजबूत हो गई थी। सामयिक पत्रों में उनके चित्र और चरित्र दनादन निकल रहे थे।....सुख की जो ऊँची से ऊँची कल्पना उन्होंने की थी, उससे भी ऊँचे जा पहुँचे थे।'' (वही, पृ.262)

लेखक यदि चाहता तो यहाँ रायसाहब के चरित्र की कथा बन्द कर सकता था। परन्तु लेखक ज़मींदार को पतनशील वर्ग के रूप में देखता है, उसकी उन्नति कैसे हो सकती है, इसलिए उपन्यास का अंत होते-होते यह बता देना जरूरी लगा कि उनकी पुत्री का तलाक हो गया है, जायंदाद का मुकदमा जिस पुत्र के लिए जीते थे, उससे उनका झगड़ा हो गया। ''और रायसाहब ने सुख का जो स्वर्ग बनाया था, उसे अपनी जिन्दगी में ही ध्वस्त होते देख रहे थे और अब संसार से निराश होकर उनकी आत्मा अन्तर्मुखी होती जाती थी।''(वही, पृ.262) होरी बर्बाद हो गया था, लेकिन रायसाहब भी आबाद हो गये हों, सो बात नहीं। प्रेमचंद के इस लेखकीय न्याय में राष्ट्रीय आन्दोलन की अनुगूँज सनायी दे सकती है।

प्रेमचंद जनतांत्रिक दृष्टि सम्पन्न लेखक हैं। उन्होंने अंग्रेजी राज का विरोध इसलिए नहीं किया है कि 'जॉन के स्थान पर गोविन्द' गद्दी पर बैठ जाये। वे शोषणहीन समाज की परिकल्पना में विश्वास करते हैं। किसी भी व्यक्ति या समूह को दूसरे का शोषण करने का अधिकार नहीं है। इसलिए जो व्यक्ति 'धनी' है वह व्यक्ति 'महान्' नहीं हो सकता,'सुन्दर' नहीं हो सकता। धन और सम्पति दूसरों के शोषण से इकठ्ठी होती है तथा शोषण का माध्यम बनती है। 1दिसम्बर 1935 को उन्होंने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को पत्र में लिखा, ''मैं ऐसे महान आदमी की कल्पना ही नहीं कर सकता जो धन-सम्पत्ति में डूबा हुआ हो। जैसे ही मैं किसी आदमी को धनी देखता हूँ, उसकी कला और ज्ञान की सब बातें मेरे लिए बेकार हो जाती है। मुझको ऐसा लगने लगता है कि इस आदमी ने वर्तमान समाज-व्यवस्थाको, जो अमीरों द्वारा गरीबों के शोषण पर आधारित है, स्वीकार कर लिया है।''(चिट्ठी पत्री, भाग-2, पृ.93 सं. अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962) प्रेमचंद ने यह पत्र उस समय लिखा था, जिस समय वे गोदान की रचना कर रहे थे। 'गोदान' में उन्होंने धन व सम्पत्ति की जगह-जगह आलोचना कर रखी है। प्रेमचंद ने 'गोदान' में होरी-धनिया के शोषण की कहानी कही है। इस वर्णन में प्रेमचंद का मानना है कि यह शोषण अवैध है, गलत है। होरी मानता है कि यह प्राकृतिक है। प्रेमचंद होरी के इस मानसिक पिछड़ेपन को उजागर करते हुए मनुष्य और मनुष्य की समानता का आधारभूत दर्शन रखते हैं। होरी व गोबर की बातचीत में यह दर्शन व्यक्त होता है -

'तुम्हारी समझ में हम और वह बराबर है।'

'भगवान ने तो सबको बराबर ही बनाया है।'

'यह बात नहीं है बेटा, छोटे-बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं। सम्पत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्वजन्म में जैसे कर्म किए हैं, उनका आनन्द भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा, तो भोगें क्या?'

'यह सब मन को समझाने की बाते हैं।' भगवान सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है। वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है। 'यह तुम्हारा भरम है। मालिक आज भी चार घण्टे रोज भगवान का भजन करते हैं।'

'किसके बल पर यह भजन-भाव और दान-धर्म होता है?'

'अपने बल पर।'

'नहीं, किसानों के बल पर और मजदूरों के बल पर यह पाप का धन पचे कैसे! इसलिए दान-धर्म करना पड़ता है, भगवान का भजन भी इसीलिए होता है। भूखे-नंगे रहकर भगवान का भजन करें, तो हम भी देखें। हमें कोई दोनों जून खाने को दे, तो हम आठों

पहर भगवान का जाप ही करते रहें। एक दिन खेत में ऊख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जाय।'(गोदान, पृ.18)

'गोदान' का यह लम्बा संवाद प्रेमचंद की उस जनतांत्रिक जीवन-दृष्टि से आया है, जिसका गहरा सम्बन्ध हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ा हुआ है। इसी आन्दोलन से समानता एवं शोषणहीन समाज की परिकल्पना आयी है। जिसके द्वारा ' गोदान' की सम्पूर्ण कथा की परिकल्पना की गयी है। प्रेमचंद में होरी की कथा का यथा तथ्य वर्णन नहीं किया है उसके दुख-दैन्य के गणित को ही स्पष्ट नहीं किया है वरन् ये सारे तथ्य इसलिए इतने विस्तार से दिये गये है ताकि यह स्पष्ट हो सके कि होरी का यह शोषण अवैध है, गैर कानूनी है, अप्राकृतिक है। शिक्षित वर्ग के सामने शोषण की अवैधता को स्पष्ट करने के लिए ही उन्होंने महाजनों द्वारा लिए जा रहे सूद का हिसाब दिया है, अत्यधिक लगान के बकाया रह जाने के दर्द को रेखांकित किया गया है। डाँड, जुरमाना, दस्तूरी आदि को स्पष्ट किया है। उनकी अत्यधिक मात्रा पर नहीं वरन् उनकी अवैधता पर प्रेमचंद बल देना चाहते हैं।

राष्ट्रीय आन्दोलन की इसी जनतांत्रिक दृष्टि के कारण होरी जैसा अपढ़, दब्बू, पिछड़ा हुआ किसान, इस उपन्यास का नायक है; अन्यथा नायकत्व की संभावनाएँ रायसाहब में सबसे अधिक हैं। यदि लेखक तटस्थ होना चाहता तो दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर मेहता को इस उपन्यास का नायक बना सकता था और तब ' गोदान' की कथा का सम्पूर्ण ढांचा बदल जाता। उसी के अनुरूप शेष प्रकरणों एवं प्रसंगों के अर्थ बदल जाते ; परन्तु प्रेमचंद ने ऐसा नहीं किया। इसलिए रायसाहब, पं. दातादीन, नोखेराम, पटेश्वरी, झिंगुरी सिंह, मंगरू शाह, मि. खन्ना जैसे चारित्रिक दृष्टि से तथाकथित शरीफ लोग खलनायक बनकर हमारे सामने आते हैं। इनको खलनायक राष्ट्रीय आन्दोलन के पक्षधर लेखक ने बनाया।

निष्कर्ष यह है कि भले ही प्रेमचंद ने उपन्यास की कथा वस्तु में राष्ट्रीय आन्दोलन का उल्लेख अपेक्षाकृत कम किया है, तब भी उपन्यास का मूल कथ्य राष्ट्रीय आन्दोलन की जनतांत्रिक भावधारा की चेतना को अभिव्यक्त करता है।

## 2.7 सारांश

'गोदान ' की कथावस्तु में राष्ट्रीय आंदोलन की उपस्थिति अपेक्षाकृत कम है, तब भी उपन्यास का कथ्य राष्ट्रीय आंदोलन की जनतांत्रिक भावधारा की चेतना को अभिव्यक्त करता है। 'गोदान ' वास्तविकतः ब्रिटिश राज द्वारा स्थापित व्यवस्था का विरोधी है। अंग्रेज राज द्वारा पोषित ज़मींदारी प्रथा के प्रमुख शोषकों द्वारा भारतीय किसानों का निरंतर शोषण अंग्रेजी सरकार की नीति का ही हिस्सा था। प्रेमचंद ने इन सभी शोषकों द्वारा ओढ़े हुए धर्म, नीति, मर्यादा, कानून, पाप-पुण्य और दया-करुणा-सहानुभूति के मुखौटे हटाएं हैं। इनकी सच्चाई से परिचित कराया है। किसान को घेरे रहने वाली ये शोषक शक्तियाँ आर्थिक रूप से किसान की इन पर पूर्ण रूप से निर्भरता के कारण, खुद को किसान का शोषण करने का अधिकारी मानती है। इस प्रवृति को बनाए रखने में अंग्रेज राज और उसके तंत्र ने पूरा साथ दिया।

प्रेमचंद ने राष्ट्रीय आंदोलन को समानता पर आधारित समाज व्यवस्था की स्थापना के पर्याय के रूप में देखा था। अतः राष्ट्रीय आंदोलन द्वारा ज़मींदारी प्रथा को नष्ट करने का प्रयास मुख्य रूप से उभर कर सामने आया। प्रेमचंद ने राष्ट्रीय आंदोलन के इस मुख्य

उद्देश्य को 'गोदान ' की कथावस्तु में इस प्रकार शामिल किया है जिससे जनचेतना का विकास हो और यही जन आंदोलन का स्वरूप ले सके।

राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना के विकास के कारण सामान्य जन में नई आशाएं, आकांक्षाएं जन्म ले रही थी। प्रेमचंद ज़मींदारी प्रथा के नष्ट किए जाने के प्रति जनसामान्य की सहमति चाहते थे। वे जान चुके थे और देख भी चुके थे कि ग्रामीण क्षेत्र में राष्ट्रीय आंदोलन ने जनसामान्य को बहुत अधिक प्रभावित नहीं किया है। लेकिन ज़मींदारी प्रथा के शोषण से ग्रामीण किसान ही प्रभावित होने के कारण, चेतना के संकेत वहीं से उभरने चाहिए थे और आगे इसे जन आंदोलन का स्वरूप प्राप्त होना भी आवश्यक था। प्रेमचंद राष्ट्रीय आंदोलन के प्रभाव और चेतना को शहरों तक सीमित देखकर चिंतित भी थे। इसलिए वे इस निष्कर्ष तक पहुँच गए थे कि जब तक ज़मींदारी और रैयतवारी प्रथाएं नष्ट नहीं होती, स्वतंत्र भारत में भी किसानों की स्थिति में कोई मूलभूत बदलाव नहीं आएगा।

साधन संपन्न वर्ग अपने आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रभाव के कारण स्वतंत्र भारत में भी सत्ताधारी बनेगा और किसान, मजदूर, दलित और पिछड़ों के शोषण के नए मार्ग खोज निकालेगा। परिणामतः शोषितों, वंचितों और उत्पीड़ितों की स्थिति में कोई बदलाव नहीं होगा। प्रेमचंद की यह चिंता 'गोदान ' की कथावस्तु में दृष्टिंगत हुई है। राष्ट्रीय आंदोलन में जनतांत्रिक चेतना के अभाव को देखकर प्रेमचंद इस निष्कर्ष तक पहुँच चुके थे कि राष्ट्रीय आंदोलन में जनसामान्य की अनुपस्थिति का अर्थ था, स्वतंत्र देश में भी देश के विकास के बारे में लिए गए निर्णयों में उनकी भागीदारी न होना। कौंसिलों के बनने पर सबसे अधिक फायदा मिला था आभिजात्य वर्ग के लोगों को, जो पहले से ही सत्ता के भागीदार थे और आगे आने वाले समय में भी इसी वर्ग के हाथ में सत्ता केंद्रित होती। एक जनतांत्रिक दृष्टि संपन्न लेखक की नज़र में ऐसी स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं था। इस स्थिति में प्रेमचंद अंत में राष्ट्रीय आंदोलन से भी असहमत होने लगे थे। उनकी नज़र में देश की स्वतंत्रता का अर्थ है शोषण विहीन समाज की स्थापना और किसी भी व्यक्ति या समूह को किसी दूसरे व्यक्ति या समूह के शोषण करने का अधिकार न होना।

शुरू में राष्ट्रीय आंदोलन से उभरती चेतना के प्रति प्रेमचंद काफी आश्वस्त दिखते है, लेकिन बाद में उनका यह विश्वास टूटता नज़र आता है। राष्ट्रीय आंदोलन में ज़मींदार, उद्योगपति, मिस्टर खन्ना और मि. तंखा जैसे लोगों का शामिल होना यह दर्शाता है। और इसी सत्तालोलुप स्वार्थी प्रवृत्तियों ने राष्ट्रीय आंदोलन को अपने कब्जे में करने के कारण स्वतंत्र भारत में भी, सत्ता इन्हीं के हाथों में केंद्रित रहेगी। प्रेमचंद राष्ट्रीय आंदोलन की सफलता के बाद भी गरीब किसान, मजदूर, दलित और पिछड़ों की स्थिति में कोई आमुलाग्र परिवर्तन होने की संभावनाओं को नहीं देख रहे थे। पराधीन देश में जिन पुरातन परंपराओं, रूढ़ी-रीतियों, जातिवाद और आर्थिक असमानताओं की स्थितियाँ मौजूद थे और उनको बदलने के लिए कोई ठोस कदम उठाए जाने चाहिए थे। समानता, स्वतंत्रता और न्याय की त्रिसूत्री पर स्वतंत्र भारत की बुनियाद डाली जानी चाहिए, यह प्रेमचंद की प्रामणिक मान्यता थी।

## 2.8 प्रश्न/अभ्यास

1) 'राष्ट्रीय आंदोलन शहर और शहरी बुद्धिजीवियों तक ही सीमित रहा ' इस कथन का स्पष्टीकरण लगभग पंद्रह पंक्तियों में कीजिए।

2) 'गोदान ' के किसान-पात्रों को राष्ट्रीय आंदोलन की लगभग कोई जानकारी नहीं थी। इस कथन को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

3) प्रेमचंद ने समानता व स्वतंत्रता पर आधारित शोषण-मुक्त स्वतंत्र-भारत की परिकल्पना की थी। क्या उस स्वतंत्र-भारत का स्वप्न आज तक साकार हुआ है?

4) 'राष्ट्रीय आंदोलन को चलाने में लक्ष्मीपतियों की निर्णायक भूमिका रही हैं। ' इस कथन की पुष्टि में लगभग पंद्रह पंक्तियों में अपने विचार स्पष्ट कीजिए।

5) राय साहब के चरित्र-चित्रण पर दस पंक्तियों में एक टिप्पण लिखिए।

# इकाई 3 'गोदान ' में नारी-चरित्र

**इकाई की रूपरेखा**


3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 नारी जीवन के प्रति प्रेमचन्द का दृष्टिकोण
3.3 चरित्र-चित्रण की विधि और नारी चित्रण
3.4 'गोदान ' में प्रस्तुत किसान नारी पात्र
3.5 'गोदान ' में चित्रित मध्यमवर्गीय नारी पात्र
3.6 जातिव्यवस्था और दलित नारी का उत्पीड़न
3.7 प्रेमचंद की दृष्टि में नारीत्व की अवधारणा
3.8 सारांश
3.9 प्रश्न/ अभ्यास
3.10 संदर्भ ग्रंथ


## 3.0 उद्देश्य

हिंदी उपन्यास एवं कहानी पाठ्यक्रम की यह तीसरी इकाई है। पिछली दो इकाइयों में क्रमशः भारतीय किसानों का ज़मींदार, महाजन, पुरोहित और अधिकारी तथा पुलिस द्वारा होने वाले शोषण का यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किया है। राष्ट्रीय आंदोलन में किसानों की अस्तित्व रक्षा चेतना की अभिव्यक्ति तथा आजाद भारत की परिकल्पना से आप परिचित हुए। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- नारी जीवन के प्रति प्रेमचंद के दृष्टिकोण को जान सकेंगे,
- 'गोदान ' में प्रस्तुत किसान नारी और मध्यमवर्गीय नारी चरित्र की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे,
- उच्चजातीय पुरुषों की दलित स्त्री के प्रति हीनदृष्टि और यौन शोषण संबंधी मानसिकता को समझ सकेंगे,
- प्रेमचंद की नारीत्व की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।

## 3.1 प्रस्तावना

'गोदान ' में प्रेमचन्द मुख्यतः छोटी जोत के किसान की अस्तित्व रक्षा से चिंतित रहे हैं। पिछली इकाइयों में आपने प्रेमचन्द की किसान जीवन संबंधी गहरी चिंताओं के कारणों को विस्तार से समझा है। प्रस्तुत इकाई में द्रष्टव्य है कि प्रेमचंद ने गाँव-जीवन में पुरुष पात्रों का ही चित्रण नहीं किया है, सिर्फ दातादीन, मँगरू, पटेश्वरी, नोखेराम, को ही उपस्थित नहीं किया है, वरन् धनिया, झुनिया, सिलिया, नोहरी और दुलारी सहुआयन को भी चित्रित किया है। पिछली इकाई में किसान-जीवन के विश्लेषण में हमने अधिकतर पुरुष पात्रों को ही आधार बनाया है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि प्रेमचंद ने ग्रामीण जीवन में नारी चरित्रों को उचित महत्व नहीं दिया है।

प्रेमचंद ने होरी का किसान के रूप में अधूरा चरित्र ही उपस्थित किया है। होरी को ढीला-ढाला, गमखोर, सबसे दबने वाला, धर्मभीरू, मर्यादा प्रेमी के रूप में उपस्थित

किया है। इस रूप में वह भारतीय किसान का प्रतिनिधि नहीं है। धनिया के स्वाभिमानी, निडर, मेहनती, कर्मठ, साहसी रूप से मिलकर ही वह भारतीय किसान की 'संश्लिष्ट प्रतिमा ' बन पाता है। धनिया के बिना वह अधूरा पात्र है।

'गोदान ' की मूल कथा बेशक होरी-धनिया के संघर्षों और पीड़ाओं की ही है। परंतु इस मूल कथा के साथ-साथ उन्होंने अनेक अवांतर कथाओं और प्रकरणों की भी सृष्टि की है, जिनमें नोहरी, झुनिया, सिलिया, चुहिया, मालती, गोविन्दी आदि अनेक नारी चरित्र हमारे सामने आते हैं। यदि इस दृष्टि से देखा जाए तो 'गोदान ' के कथाकार के सामने दो ही मुख्य प्रश्न उपस्थित हैं - एक किसान के अस्तित्व रक्षा की चिंता, और दो नारीत्व को परिभाषित करने का आधार। किसान जीवन के संदर्भ में 'गोदान ' का मूल्यांकन विश्लेषण हम पिछली इकाई में कर चुके हैं। अब हम 'गोदान ' में नारी चरित्रों को समझने का प्रयत्न करेंगे।

प्रेमचंद के साहित्य की शुरूआत नारी के उत्पीड़न के विरोध से होती है। उनके प्रथम उपन्यास 'असरारे मआबिद उर्फ देवस्थान-रहस्य ' में मंदिरों में स्त्रियों को मूर्ख बनाने और उन्हें ठगने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है। इसके बाद 'प्रेमा ', 'सेवासदन ', 'निर्मला ' आदि उपन्यासों एवं अनेक कहानियों में नारी-जीवन के विविध पक्षों को उद्घाटित किया गया है। उनकी अन्य रचनाओं में भी नारी-जीवन को पर्याप्त महत्व दिया गया है। रंगभूमि में इन्दु और राजा महेन्द्र प्रताप के संबंधों का तनाव व्यक्त हुआ है। 'कायाकल्प ' में ठाकुर विशाल सिंह के बहु विवाहों का वर्णन है। 'कर्मभूमि ' के केन्द्र में अंग्रेज सिपाहियों द्वारा मुन्नी के साथ किया गया बलात्कार है। 'गोदान ' में भी प्रेमचंद ने नारी पात्रों को समुचित स्थान दिया है। यदि गाँव और शहर की अलग-अलग कथाओं का केन्द्र बिंदु खोजें तो स्पष्ट पता चलता है कि शहरी जीवन की कथा के केंद्र में मालती है।

## 3.2 नारी जीवन के प्रति प्रेमचंद का दृष्टिकोण

यह सही है कि गाँव-जीवन का केंद्रीय पात्र होरी है और होरी के किसान बने रहने की चिंता लेखक की मुख्य चिंता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो किसान-संबंधी चिंतन में रचनाकार के मन में जिज्ञासा का भाव नहीं है। इस विषय पर वे मनन कर चुके हैं, संगत निष्कर्षों पर पहुँच चुके हैं। इस विषय पर अब उनको कोई बहस नहीं करनी है। वे जानते हैं कि किसान की समस्याएँ क्या हैं और इसे प्रेमचंद उपन्यास में बताते हैं, समझाते हैं। इसलिए इस प्रकरण में रचनाकार का आत्मविश्वास कथा को गति देता है, चरित्र को दिशा देता है, परिस्थितियों का समग्र मूल्यांकन कर डालता है। कहीं हिचक नहीं है। संकोच नहीं है। यह भाव नहीं है कि सत्य का कोई दूसरा रूप भी हो सकता है, इसकी कहीं कोई संभावना नहीं है। यह 'सत्य ' वही है जो लेखक ने देखा है, जो लेखक दिखा रहा है। इसमें विवाद की गुंजाइश नहीं है। संवाद की संभावना नहीं है। इस विषय पर जब भी दो पात्र बात करेंगे, वे एक ही बात को आगे बढ़ाएँगे। उनके संवाद परस्पर पूरक ही होंगे। इसमें परिवर्तन की गुंजाइश लेखक नहीं छोड़ता। यह आत्मविश्वास गंभीर चिंतन मनन के बाद आता है, इसमें कोई शक नहीं।

परंतु प्रेमचंद जब नारी पात्रों की तरफ़ मुड़ते हैं, तब उनमें वैसा आत्मविश्वास दिखाई नहीं देता। यहाँ ऐसा लगता है मानों इस पर लेखक को नए ढंग से विचार करना है, लेखक चिंतन करता है तथा चिंतन को आमंत्रित करता है। इस विषय पर अभी प्रेमचंद किसी अंतिम निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके हैं। इसलिए वे एक ऐसी संभावना छोड़ते जाते हैं कि

संभव है कोई कमी रह जाए। अतः संदेह का भाव बना रहता है, बहस समाप्त होते-होते फिर गुंजाइश के लिए जगह छूट जाती है। मालती के शब्दों में लेखक कहता है 'फिर अभी यह कौन जानता है कि स्त्रियाँ जिस रास्ते पर चलना चाहती हैं, वही सत्य है। बहुत संभव है, आगे चलकर हमें अपनी धारणा बदलनी पडे ' (गोदान, पृष्ठ 133) किसान जीवन के किसी प्रसंग में ऐसी किसी संभावना की गुंजाइश प्रेमचंद ने नहीं छोड़ी है। प्रेमचंद ने बहुत सारे नारी-चरित्र सामने रखे हैं। उनके जीवन को अनेक तरह से देखा, जाँचा, परखा, बहस की, विचार किया और फिर भी अंतिम रूप से कुछ कह नहीं पाए। मेहता नहीं कह पाए, मालती नहीं कह पायी, गोविंदी नहीं कर पायी, सरोज नहीं कह पायी। सबने तर्क दिए। तर्क देते हुए भी गुंजाइश छोड़ दी। खुलापन रह गया।

एक बात और भी है। 'गोदान ' में प्रेमचंद ने किसान के रूप में होरी को मन लगाकर चित्रित किया है। होरी की यदि हीरा, गिरधर, शोभा, भोला से तुलना करें तो स्पष्ट दिखायी देता है कि लेखक ने इन पात्रों के साथ न्याय नहीं किया है। इनंको पूर्णतः अभिव्यक्त होने का अवसर नहीं दिया गया है। होरी की तुलना में अन्य पुरुष पात्र (किसान) गौण पात्रों से भी कम स्थान घेरे हुए है। लेखक की दृष्टि के केंद्र में बेलारी के आते ही होरी आ जाता है, उसी के चरित्र में शेष पात्रों की चिंताएँ भी घुल-मिल जाती हैं। हाँ दातादीन, झिंगुरी सिंह, नोखेराम, पटेश्वरी के चरित्र फिर भी उभरे हुए हैं, परंतु ये सब किसान पात्र नहीं हैं। ये तो शोषकों की जमात के हैं। इनकी पहचान जरूरी है। ऐसी स्थिति स्त्री पात्रों (किसान) की नहीं है। यहाँ धनिया का एकछत्र साम्राज्य नहीं है। दूसरे नारी पात्रों को भी लेखकीय संरक्षण मिला है। पुनिया, झुनिया, चुहिया, नोहरी आदि सभी पात्र अपना स्वतंत्र जीवन एवं चरित्रगत विशेषताएँ लेकर हमारे सामने आते हैं।

## 3.3 चरित्र-चित्रण की विधि और नारी चित्रण

प्रेमचंद अपने पात्रों का चरित्र-चित्रण करने के लिए आम तौर पर चार विधियों का प्रयोग करते हैं।

इस विधि के अनुसार लेखक स्वयं प्रस्तुत पात्र के बारे में अपनी राय देता है। उसके जीवन की कुछ घटनाओं का विवरण देते हुए उसके चरित्र के बारे में अपने निष्कर्ष बताता रहता है, जिससे पाठक उस पात्र के बारे में एक विशेष प्रकार की राय बनाते हुए कथा में प्रवेश करता है। इस स्थिति में कई बार प्रेमचंद रौ में बह जाते हैं, वर्णन करते समय प्रस्तुत संदर्भ को ध्यान में रखते हुए अतिरंजित बातें लिख जाते हैं। वे कई बार ऐसी बातें भी लिख जाते हैं जिनका किसी पात्र के भावी विकास से कोई संबंध नहीं होता। भूमिका बाँधते समय, परिस्थितियों का अतिरंजित वर्णन करते हुए वे ऐसी अनेक खटकने वाली बातें भी कह जाते हैं, जो कोई भी कला सजग रचनाकार नहीं लिखता। उदाहरण के लिए झुनिया के चरित्र के इन प्रकरणों को लिया जा सकता है - गोबर -झुनिया के प्रारंभिक मिलन के अवसर पर उन्होंने लिखा है - 'वह विधवा है। उसके नारीत्व के द्वार पर पहले उसका पति रक्षक बना बैठा रहता था। वह निश्चिंत थी। अब उस द्वार पर कोई रक्षक न था। इसलिए वह उस द्वार को सदैव बंद रखती है। कभी-कभी घर के सूनेपन से उकताकर वह द्वार खोलती है, पर किसी को आते देखकर भयभीत होकर दोनों पट भेड़ लेती है। ' (वही, पृष्ठ 24)

इसी झुनिया के संबंध में लेखक बाद में यह टिप्पणी करता है - 'उसे तरह-तरह के मनुष्यों से साबिका पड़ चुका था। दो-चार रूपए उसके हाथ लग जाते थे, घड़ी भर के

लिए मनोरंजन भी हो जाता था, मगर वह आनंद जैसे मँगनी की चीज़ हो। उसमें टिकाव न था, समर्पण न था, अधिकार न था। वह ऐसा प्रेम चाहती थी, जिसके लिए वह जिए और मरे, जिस पर वह अपने को समर्पित कर दे। वह केवल जुगनू की चमक नहीं, दीपक का स्थायी प्रकाश चाहती थी। वह एक गृहस्थ की बालिका थी, जिसके गृहणीत्व को रसिकों की लगावटबाजियों ने कुचल नहीं पाया था। ' (वही पृष्ठ 40-41)

झुनिया जब होरी के घर पर रहने लगी तब एक दिन मातादीन आया और झुनिया से चिकनी चुपड़ी बातें करने लगा। वह रोने लगी। मातादीन ने धीरे से उसका हाथ पकड़ लिया। आहिस्ता से उसने हाथ छुड़ाया। इसी समय सोना आयी और उसने पूछा कि मातादीन क्या करने आए थे? झुनिया बोली 'पगहिया माँग रहे थे। मैंने कह दिया यहाँ पगहिया नहीं है। ' (पृष्ठ 151, गोदान)

इन विरोधी वक्तव्यों से पाठक उलझन में पड़ जाता है। ऐसे अवसर पर वह प्रस्तुत प्रकरण को सत्य मानकर, पिछली राय परिवर्तित करता चलता है। कई बार कोई पात्र ऐसा व्यवहार कर देता है, जिससे लेखक का वक्तव्य निरर्थक ही नहीं, मिथ्या प्रमाणित हो जाता है। परंतु प्रेमचंद इस ओर विशेष ध्यान नहीं देते। वे राय देने से कभी किसी प्रकरण में चुकते नहीं। वे पात्र के बारे में हमेशा राय देते हैं और अंतिम राय देते हैं।

कभी-कभी लेखक के ही अंदाज में एक पात्र दूसरे पात्र के बारे में अपनी राय देने लग जाता है। जिससे उसके व्यक्तित्व का उद्‌घाटन होता है। पात्रों पर की गयी इन टिप्पणियों में भी अक्सर लेखक की सहमति होती हे। उसमें भी वक्ता सर्वज्ञ की तरह बोलता है, जिसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ता। मेहता एक बार मालती से कहता है - 'तुम सब कुछ कर सकती हो, बुद्धिमती हो, चतुर हो, प्रतिभावान हो, दयालु हो, चंचल हो, स्वाभिमानी हो, त्याग कर सकती हो, लेकिन प्रेम नहीं कर सकतीं। ' (वही, पृष्ठ 69) इस वक्तव्य पर मालती टिप्पणी करती है - 'झूठे हो तुम, बिल्कुल झूठे। मुझे तुम्हारा यह दावा निस्सार मालूम होता है कि नारी-हृदय तक पहुँच जाते हो। ' (वही, पृष्ठ 69)

इसी तरह गोविन्दी की राय भी मालती के बारे में खास अच्छी नहीं है। 'मेरी दृष्टि में वह वेश्याओं से भी गयी-बीती है, क्योंकि वह परदे की आड़ से शिकार खेलती है। ' (वही, पृष्ठ 160) खन्ना भी उसे विवाह या प्रेम के लायक नहीं मानता। आमतौर से ये टिप्पणियाँ भी कथा-प्रवाह में मिथ्या साबित हो जाती है, परंतु इससे वक्ता का व्यक्तित्व भी प्रकट हो जाता है। उदाहरण के लिए गोविन्दी की टिप्पणियों से हम मालती के बारे में न सही परंतु उसके स्वयं के बारे में तो जान ही जाते हैं। गोविंदी खन्ना की पत्नी है, जिसे उपन्यास के आरंभ में लेखक ने कामिनी खन्ना कहकर परिचित कराया है। उसके मन में मालती के प्रति पराजित मन की ईर्ष्या भरी हुई है। जब भी उसके सामने मालती आती है या मालती का जिक्र आता है तो उसे ठेस लगती है, दर्द होता है और उसकी ईर्ष्या कुत्सा के रूप में फूट पड़ती है। उसे शक है कि मालती उसके पति के पीछे पड़ी हुई है या खन्ना मालती से जितना प्रेम करते हैं, उतना ही उसको दुत्कारते हैं। जबकि उपन्यास के पहले दृश्य से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि खन्ना भले ही मालती के आगे-पीछे घूम रहा हो, मालती मेहता के प्रति ही आकर्षित है और मेहता इस सबसे निर्लिप्त है।

'गोदान ' के पात्र कई बार अपने बारे में वक्तव्य देकर भी अपने चरित्र को उद्‌घाटित करते हैं। इसमें भी वह पात्र सर्वज्ञ की तरह अंतिम राय देता है और किसी तरह की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ता। ऐसे वक्तव्यों से भी आमतौर पर लेखक की सहमति होती है।

झुनिया सोना से अपने बारे में कहती है 'सिवाय मीठी-मीठी बातों के वह झुनिया से कुछ नहीं पा सकते। और अपनी मीठी बातों को महँगे दामों बेचना भी मुझे आता है। मैं ऐसी अनाड़ी नहीं हूँ कि किसी के झाँसे में आ जाऊँ। हाँ, जब जान जाऊँगी कि तुम्हारे भैया ने वहाँ किसी को रख लिया है, तब की नहीं चलाती। '(वही, पृष्ठ 157) यदि कभी कोई असहमति की बात होती है तो प्रेमचंद उस असहमति को रेखांकित करके पाठक को पात्र के बारे में उस समय तक निश्चित राय दे देते हैं।

पात्र अपने कर्मों के द्वारा भी अपने चरित्र को उद्घाटित करते हैं। परंतु प्रेमचंद के पात्र अपने क्रिया-कलापों से अपना व्यक्तित्व बहुत कम व्यक्त कर पाते हैं। अधिकतर उनके बारे में दूसरे पात्रों की टिप्पणी या लेखक के परिचयात्मक विश्लेषण या स्वयं के बारे में कहे गये वक्तव्यों से उसका व्यक्तित्व उद्घाटित हो जाता है। पात्र के कर्म तो उन निष्कर्षों की पुष्टि के लिए दिए गए उदाहरण के समान होते हैं, उनका स्वतंत्र महत्व बहुत कम होता है। आज के पाठक को यह आरोपित रचना-पद्धति खटकती है, परंतु प्रेमचंद इन चारों पद्धतियों का प्रसंगानुसार उपयोग करके थोड़ा बहुत घटा-बढ़ाकर चरित्र का ढांचा निर्मित कर देते हैं।

यह अवश्य होता है कि पाठक की नज़र पात्र के कर्मों पर ही होती है। इसके कारण कई बार लेखक द्वारा दिया गया वक्तव्य भ्रमपूर्ण लगने लगता है। उदाहरण के लिए सिलिया के चरित्र को लिया जा सकता है।

मातादीन ने सिलिया को अनाज के ढेर से एक सेर अनाज, उसे पूछे बिना उठाते देखा तो, सिलिया से अनाज छिन कर अपमानित करके घर से निकल जाने के लिए कहा। प्रेमचंद ने इस प्रसंग को चित्रित करके पुरुष प्रधान समाज में स्त्री के हो रहे शोषण व उसके अधिकारों के हनन को दर्शाया है। यहाँ सिलिया मातादीन की ब्याहता नहीं है, और वह दिन-रात मेहनत-मजदूरी करके अपना पेट खुद पाल रही है। मातादीन ने केवल शारीरिक आकर्षण के कारण सिलिया से बिना ब्याह किए घर पर रखा है। मातादीन को सिलिया का अनाज के ढेर से एक सेर अनाज उठा लेना उसकी चल-अचल संपत्ति में हिस्सेदारी दर्शाने की कोशिश लगती है। प्रेमचंद ने भी इस प्रसंग को आर्थिक सत्ता या भागीदारी तक ही जोड़ा है। लेकिन यदि गहराई से देखा जाए तो इसके कई पहलू हमारे सामने उभरकर आते हैं। सिलिया का निम्न जाति होना उसके जीवन की त्रासदी का सबसे अहं पहलू है। मातादीन का बिना विवाह किए ही सिलिया के साथ शारीरिक संबंध जोड़ना, उससे दिन रात मेहनत करवाना और अपने ब्राह्मणत्व को बचाने के झूठे प्रयास में, सिलिया द्वारा पकाया भोजन न खाना। उच्चवर्णीय समुदाय द्वारा अछूतों के साथ किए जाने वाले व्यवहार का ही हिस्सा है। सिलिया द्वारा इसका विरोध न करना, ना तो वह मातादीन द्वारा उसे रखैल बनाकर रखने से दुखी है। जन्म सिद्धांत और कर्मपाक सिद्धांत में वह विश्वास करती है और इस विश्वास को बनाए रखने का सतत प्रयास दातादीन व मातादीन जेसे ब्राह्मणों द्वारा किया जाता है। सिलिया में अपने अस्तित्व के प्रति चेतना का अंश दिखाई नहीं देता। माँ और भाइयों द्वारा उसे अपने घर व बिरादरी में वापस ले जाने के प्रयास भी सिलिया असफल बना देती है। मातादीन के प्रति अटूट प्रेम होने का भी यहाँ कोई संकेत नहीं मिलता, ना ही उससे विवाह करके सम्मानपूर्वक पत्नि का दर्जा देने का कोई आश्वासन मातादीन की ओर से उसे मिला है। बल्कि मातादीन का आँखे निकालकर कहना - ''नहीं, तुझे कोई अख्तियार नही हैं। काम करती है, खाती है। जा तू चाहे कि खा भी, लुटा भी, तो यह यहाँ न होगा। अगर तुझे यहाँ न परता पड़ता हो, कहीं और जाकर काम कर। मजूरों की कमी नहीं है। सेंत में नहीं लेते, खाना-कपड़ा देते हैं।'' (प्रेमचंद - गोदान, पृ. 213) मातादीन ने सिलिया

को एक भोगदासी और मुफ्त में काम करने वाली मजदूरनी से ज्यादा नहीं समझा। जब कि सिलिया सोचती है, ''अब उसके लिए दूसरा कौन सा ठौर है! वह ब्याहता न होकर भी संस्कार में और व्यवहार में और मनोभावना में ब्याहता थी, और अब मातादीन चाहे उसे मारे या काटे, उसे दूसरा आश्रय नहीं है, दूसरा अवलम्ब नहीं है।'' प्रेमचंद सिलिया को शोषण व्यवस्था का विरोध करते नहीं दर्शाते, बल्कि शोषण के आगे सिर झुकाकर समर्पण करते ही दर्शाते हैं। होरी की तरह ही सिलिया भी जातिगत शोषण का विरोध करने के स्थान पर स्थितियों से समझौता करती है। वह भाग्यवाद और कर्मवाद पर विश्वास करती है इसलिए अनब्याही पत्नी के रूप में मातादीन के साथ रहने में उसके मन में किसी प्रकार का अपमानबोध नहीं जागता।

प्रेमचंद की टिप्पणी है 'सिलिया सोच रही थी, अब उसके लिए दूसरा कौन-सा ठौर है। वह ब्याहता न होकर भी संस्कार में और व्यवहार में और मनोभावना में ब्याहता थी, और अब मातादीन चाहे उसे मारे या काटे, उसे दूसरा आश्रय नहीं, दूसरा अवलम्ब नहीं है। ' (वही, पृष्ठ 208)

होरी राय देता है 'एक यह नोहरी है और एक यह चमारिन सिलिया। देखने-सुनने में उससे लाख दरजे अच्छी। चाहे दो को खिलाकर खाए और राधिका बनी घूमे, लेकिन मजदूरी करती है, भूखों मरती है और मतई के नाम पर बैठी है, और वह निर्दयी बात भी नहीं पूछता। ' (वही, पृष्ठ 247)

इस सिलिया को कई दिनों बाद मातादीन ने होरी के हाथों दो रूपए भिजवाए। इससे सिलिया अत्यंत प्रसन्न हुई। अपनी इस प्रसन्नता को बाँटने के लिए वह रात में नदी नाले पार करके अपनी हम उम्र सहेली सोना के ससुराल पहुँच जाती है। वहाँ एकांत में सोना के पति मथुरा से भेंट होती है। क्षण भर की बातचीत में 'सिल्लों का मुँह उसके मुँह के पास आ गया था और दोनों की साँस और आवाज और देह में कम्पन हो रहा था। ' (वही, पृष्ठ 250) बेशक यह स्खलन क्षणिक था। लेखक ने तत्क्षण सोना को भेज कर इस क्षण में सिलिया को बचा लिया। परंतु इस 'क्षण ' की नाजुक बेला में सिलिया के चरित्र की गति तो उद्घाटित हो गयी। भले ही यह प्रकरण मनोवैज्ञानिक दृष्टि से एकदम स्वाभाविक है, प्रेमचंद इस क्षणिक आवेग को महत्वहीन मानते हो, माना भी है। परंतु इस क्षण सिलिया का चरित्र लेखक व होरी के कथनों के विपरीत तो हो ही गया।

## 3.4 गोदान में प्रस्तुत किसान नारी पात्र

प्रेमचंद ने किसान नारी की पीड़ा एवं दर्द को किसान जीवन की त्रासदी के साथ ही प्रस्तुत कर दिया है। होरी के घर में अनाज नहीं है, इसका दर्द होरी को भी है और धनिया को भी। पुनिया के घर से एहसान में अनाज पाकर धनिया की जो हेठी हुई है, उसकी मर्मांतक पीड़ा किसान जीवन की पीड़ा है। इसी तरह होरी जब बाहर से लुट कर आता है, तो धनिया उसके सीधेपन पर या भलमनसाहत पर खीझती है, होरी को कोसती है, यह होरी-धनिया का साझा अनुभव है। यह मात्र धनिया की परेशानी नहीं है। धनिया से लताड़ खाता हुआ होरी धनिया से सहमत भी होता है। इस रूप में धनिया होरी की चेतना का दूसरा पक्ष है, उसी का अधूरा भाग है, जिसे होरी ने अपने मन में नष्ट कर दिया है, परंतु प्रेमचंद ने उस चेतना को धनिया की काया में गढ़कर मूर्तिमान कर दिया है। गरीबी, शोषण, अन्याय, अत्याचार, भूखमरी का धनिया का दर्द साझा पारिवारिक दर्द है, जिसे होरी भी झेलता है। होरी और धनिया की लड़ाई और विवाद भी उनका अंतःसंघर्ष कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इसलिए हम देखते हैं कि उनके

आपसी संघर्ष पारिवारिक विघटन तक नहीं पहुँच पाते। इनके बीच बात-चीत बंद हो सकती है। यह कई दिनों तक चल सकती है परंतु इनमें से कोई भी यह नहीं सोचता कि एक दूसरे को त्याग दे। प्रेमचंद के मन में इसकी बड़ी गाढ़ी तस्वीर है, जिसे उन्होंने मन लगाकर चित्रित किया है।

प्रेमचंद ने किसान परिवारों की एक विशेषता का वर्णन किया है, विशेषतः दलित किसानों में पति-पत्नी के बीच की मार-पीट का वर्णन। मध्यवर्गीय जीवन में इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। यदि वहाँ मारपीट हो जाए तो विवाह-विच्छेद निश्चित है, क्योंकि मध्यवर्गीय स्त्री अपने अस्तित्वबोध के प्रति सचेत है। जैसा कि रायसाहब की पुत्री एवं दामाद के बीच हुआ। गोबर गाँव छोड़कर शहर जा रहा था तो रास्ते में एक स्थान पर पति-पत्नी आपस में लड़-झगड़ रहे थे। पति ने उससे घर चलने का आग्रह किया, पत्नी ने इनकार कर दिया। देर तक आरजू-मिन्नत करने के बाद पति को क्रोध आया और वह उसे घसीटने लगा। इस झगड़े के बीच में गोबर बोल पड़ा। अब विवाद गोबर व पुरुष के बीच होने लगा। गोबर पत्नी का पक्ष ले रहा था। दोनों में मारपीट होने ही वाली थी कि युवती बोली 'तुम क्यों लड़ाई करने पर उतारू हो जी, अपनी राह क्यों नहीं जाते? यहाँ कोई तमाशा है? हमारा आपस का झगड़ा है। कभी वह मुझे मारता है, कभी मैं उसे डाटती हूँ। तुमसे मतलब? फिर थोड़ी देर बाद वह युवती 'गृहिणी बन गई ' और मारपीट, गाली-गलौज को भूल-भाल कर प्रेमपूर्वक ऐसे बात करने लगी, जैसे कहीं कुछ हुआ ही नहीं।

हीरा-पुनिया के बीच भी मारपीट हुई, प्रेमचंद ने उसका भी वर्णन किया है। 'हीरा-बहू अपने घर की मालकिन थी। उसी के विद्रोह से भाइयों में अलगौझा हुआ था। धनिया को परास्त करके शेर हो गयी थी। हीरा कभी-कभी उसे पीटता था। अभी हाल में इतना मारा था कि वह कई दिन तक खाट से न उठ सकी, लेकिन अपना अधिकार वह किसी तरह न छोड़ती थी। हीरा क्रोध में उसे मारता था, लेकिन चलता था उसी के इशारों पर, उस घोड़े की भाँति, जो कभी-कभी स्वामी को लात मारकर भी उसी के आसन के नीचे चलता है। ' (वही, पृष्ठ 27) गोबर-झुनिया के बीच में भी झगड़ा हुआ, यहां तक कि सीधा-सादा गमखोर होरी भी धनिया को पीटने लग जाता है। इस मारपीट और झगड़े के बाद कई दिनों तक अबोला रह जाता है। यह अबोला किसी प्राकृतिक विपदा या संकट के समय समाप्त हो जाता है तथा वह दाम्पत्य-जीवन पुनः अपनी गति पकड़ लेता है।

गोबर-झुनिया का झगड़ा हुआ। दोनों के बीच संवादहीनता आ गयी। इस बीच मिल में हड़ताल हुई और वहाँ हुए झगड़े में गोबर बुरी तरह घायल होकर घर पहुँचा। 'झुनिया ने गोबर की वह चेष्टाहीन लोथ देखी तो उसका नारीत्व जाग उठा। ' (वही, पृष्ठ 235) उसने तन-मन से गोबर की सेवा-सुश्रुषा की। इसी तरह होरी को ज्वर आया तो धनिया का भी ममत्व जाग उठा - 'लाख बुरा हो, पर उसी के साथ जीवन के पचीस साल कटे हैं, सुख किया है तो उसीके साथ, दुःख भोगा है तो उसी के साथ। अब तो चाहे वह अच्छा है या बुरा, अपना है। दाढ़ीजार ने मुझे सबके सामने मारा, सारे गाँव के सामने मेरा पानी उतार लिया, लेकिन तब से कितना लज्जित है कि सीधे ताकता नहीं। खाने आता है तो सिर झुकाए खाकर उठ जाता है, डरता रहता है कि मैं कुछ कह न बैठूँ। (वही, पृष्ठ 99)

'गोदान ' के किसान दाम्पत्यों के बीच के संघर्ष पारिवारिक विघटन तक न पहुँचने का कारण वहीं नहीं है, जो प्रेमचंद सोच रहे थे। साहचर्यजन्य प्रेम अथवा एक दूसरे के प्रति

त्याग की भावना जैसी आदर्शवादी स्थिति के होने का आभास पैदा किया गया है। वास्तविकतः यहाँ पितृसत्तात्मक प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखते है। स्त्री की अधीनता व सामाजिक दबाव के कारण सभी किसान नारी चरित्र पति के द्वारा किए गए अपमान, उत्पीड़न को चुपचाप सहती नजर आती है। कोई भी विद्रोह या विरोध नहीं करती। 'पति-पत्नी में झगड़े तो होंगे ही ' या 'यह हमारा आपस का झगड़ा है '। 'लाख बुरा हो, पर उसी के साथ जीवन के पचीस साल कटे हैं। जैसे सांत्वना भरे शब्दों से सभी नारी चरित्र अपने आप को रिझाते हुए दिखते है। दाम्पत्य जीवन के फिर से उसी गति से चल पड़ने पर प्रेमचंद काफी संतुष्ट दिखते हैं। लेकिन 'गोदान ' के गाँवों की नारी अधिकारहीन व अधीन है, परिवार के द्वारा लिए गए किसी निर्णय में उसकी सहभागिता नहीं है। अशिक्षित होने के कारण अपने अस्तीत्व के प्रति सजग नहीं है। यही कारण है कि ग्रामीण स्त्री अवहेलना, अपमान और उत्पीड़न को चुपचाप सहने के लिए बाध्य है। बहुत हुआ तो विरोध का रूप कुछ दिनों तक अबोला रहने तक सीमित रह जाता है।

इसके अलावा प्रेमचंद ने ग्रामीण जीवन में विवाहेतर यौन-संबंधों का वर्णन भी किया है। इस प्रकरण में प्रेमचंद ने समाज के उत्पीड़क वर्गों द्वारा दलित वर्ग की स्त्रियों के यौन-शोषण का मुद्दा उठाया है। पटेश्वरी 'सरकार बहादुर ' के नौकर हैं। उनके बारे में 'लोगों का ख्याल था कि वह अपनी विधवा कहारिन को रखे हुए हैं । ' (वही, पृष्ठ 220) इधर रायसाहब के कारिंदे नोखेराम को जब मौका मिला तो भोला की नयी पत्नी नोहरी को अपने घर रख लिया। जैसे बाप वैसे ही उनके बेटे। दशहरे की छुट्टियों में झिंगुरी, पटेश्वरी, नोखेराम के लड़के घर आए। 'तीनों दिन भर ताश खेलते, भंग पीते और छैला बने घूमते। वे दिन भर कई-कई बार होरी के द्वार की ओर ताकते हुए निकलते और कुछ ऐसा संयोग था कि जिस वक्त वे निकलते, उसी वक्त सोना भी किसी-न-किसी काम से द्वार पर आ खड़ी होती। ' (वही, पृष्ठ 213) इनके अलावा प्रेमचंद ने पंडित दातादीन के पुत्र मातादीन एवं सिलिया चमारिन के बीच चल रहे प्रेम संबंधों का विस्तृत वर्णन किया है। इस प्रकरण में सिलिया की एकाग्र प्रेम-भावना एवं मातादीन की चरित्र-हीनता का वर्णन उन्होंने एकाधिक बार किया है।

सिलिया- मातादीन के झूठे प्रेमजाल में फंसी है। वह समझती है कि मातादीन ब्राह्मण होकर भी चमारिन सिलिया को पत्नी के रूप में घर में रखा है तो जरूर उसके मन में सिलिया के प्रति अटूट प्रेम है। अपनी बिरादरी का विरोध सहकर भी मातादीन सिलिया को अपनी पत्नी के रूप में घर में रखता जरूर है लेकिन उसका प्रेम केवल शारीरिक है। सिलिया के यौवन भरे शरीर के प्रति वह आकर्षित है। निम्न जाति की सिलिया को वह मन बहलाने वाले खिलौने की तरह समझता है। सिलिया के साथ शारीरिक संबंध रखने पर उसे कोई छुआछूत या ब्राह्मण होने के अंह का अहसास नहीं होता। लेकिन सिलिया द्वारा पकाया खाना वह नहीं खाता। अपनी रसोई वह खुद पकाकर खाता है। धर्म की रक्षा मातादीन के लिए सिलिया द्वारा छुआ खाना न खाने तक सीमित है। 'हमारा धर्म है हमारा भोजन। भोजन पवित्र रहे, फिर हमारे धर्म पर कोई आंच नहीं आ सकती। रोटियाँ ढाल बनकर अधर्म से हमारी रक्षा करती हैं। ' यही नहीं सिलिया उसकी संपत्ति या खेत के अनाज की भी हिस्सेदार नहीं है। वह अधिकार उसे कभी भी नहीं दिया गया और जब उसने मातादीन से पूछे बिना ही दो मुट्ठी अनाज उठाया तो सिलिया को उसका सही स्थान व दर्जा और अधिकार क्षेत्र कहाँ तक है यह समझा दिया जाता है। अपमानित करके घर से निकाल दिया जाता है। उस घर से जो कभी भी सिलिया का नहीं था।

"सिलिया सोच रही थी, अब उसके लिए कौन सा ठोर है! वह ब्याहता न होकर भी संस्कार में और व्यवहार में और मनोभावना में ब्याहता थी, और अब मातादीन चाहे उसे

मारे या काटे, उसे दूसरा आश्रय नहीं है, दूसरा अवलम्ब नहीं है। उसे वह दिन याद आए - और अभी दो साल भी तो नहीं हुए - जब यही मातादीन उस के तलवे सहलाता था, जब उसने जनेऊ हाथ में लेकर कहा था सिलिया, जब तक दम में दम है, तुझे ब्याहता की तरह रखूँगा, जब वह प्रेमातुर होकर घर में और बाग में और नदी तट पर उसके पीछे-पीछे पागलों की भांति फिरा करता था। और आज उसका यही निष्ठुर व्यवहार। मुट्ठी भर अनाज के लिए उसका पानी उतार लिया। ''(प्रेमचंद - गोदान, पृ. 208)

## 3.5 गोदान में चित्रित मध्यवर्गीय नारी पात्र

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि 'गोदान ' की शहरी कथा के केंद्र में मालती है। उपन्यास में मालती का प्रवेश रायसाहब द्वारा दी गयी दावत में होता है। इसके बाद जब भी उपन्यास मे शहर आता है, मालती अवश्य आती है। आरंभ में प्रेमचंद ने मालती का परिचय उपहास के स्वर में दिया है। उन्होंने लिखा है - 'दूसरी महिला जो ऊँची एड़ी का जूता पहने हुए है और जिनकी मुख छवि पर हँसी फूटी पड़ती है, मिस मालती हैं। आप इंग्लैंड से डाक्टरी पढ़ आयी हैं और अब प्रेक्टिस करती हैं। ताल्लुकेदारों के महलों में उनका बहुत प्रवेश है। आप नवयुग की साक्षात प्रतिमा हैं। गात कोमल, पर चपलता कूट-कूट कर भरी हुई है। झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं, मेक-अप में प्रवीण, बला की हाजिर-जवाब, पुरुष-मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, आमोद-प्रेमाद को जीवन का तत्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण। जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन, जहाँ हृदय का स्थान है, वहाँ हाव-भाव, मनोद्गारों पर कठोर निग्रह, जिसमें इच्छा या अभिलाषा का लोप-सा हो गया। ' (वही, पृष्ठ 48-49) इसके विपरीत उन्होंने खन्ना की पत्नी को बहुत आदर-सम्मान से प्रस्तुत किया है। 'वह जो खादी की साड़ी पहने बहुत गंभीर और विचारशील-सी है, मिस्टर खन्ना की पत्नी कामिनी खन्ना है। ' (वही, पृष्ठ 48) हालांकि अगले दिन की शिकार पार्टी के दौरान वे उसके अस्तित्व को ही भूल गए। यहाँ तक कि उपन्यास में लेखक उसका नाम भी याद नहीं रखता। यहाँ उसे कामिनी खन्ना कहकर परिचय करवाया गया है. बाद में वह इसे गोविन्दी नाम से संबोधित करता है।

आरंभ से ही प्रेमचंद परंपरा और आधुनिकता, भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता का द्वंद्व खड़ा करना चाहते हैं। गोविंदी को वे भारतीय नारी के आदर्श के रूप में चित्रित करना चाहते थे। मेहता जैसा विचारशील पुरुष उसी को अपना आदर्श मानता है। परंतु उपन्यास के विकास क्रम में वह इस 'आदर्श ' की रक्षा नहीं कर पाती तथा मालती के प्रति लेखक के दृष्टिकोण में लगातार परिवर्तन होता रहता है। कथा के विकास-क्रम में वे थोड़ी-देर बाद ही लिखते हैं, 'मालती बाहर से तितली है भीतर से मधुमक्खी। ' (वही, पृष्ठ 131) उपन्यास का अंत होते-होते मेहता भी मालती के भक्त हो जाते हैं और लेखक उसी का आदर्शीकरण करने लग जाता है। 'मालती केवल रमणी नहीं है, माता है और ऐसी-वैसी माता नहीं, सच्चे अर्थ में देवी और माता और जीवन देने वाली, जो पराए बालक को भी अपना समझ सकती हैं, जैसे उसने मातापन का सदैव संचय किया हो और आज दोनों हाथों से उसे लुटा रही है। ' (वही, पृष्ठ 280)

मालती अविवाहित है। उपन्यास के अंत में भी वह अपने इसी निश्चय पर कायम है कि 'मित्र बनकर रहना स्त्री-पुरुष बनकर रहने से कहीं सुखकर है। ' (वही, पृष्ठ 283) और तो और मालती को सारे शहर में बदनाम करने वाली गोविंदी भी एक दिन सोचती है - 'बहुत अच्छा करती है, जो ब्याह नहीं करती। अभी सब उसके गुलाम हैं। तब वह एक की लौंडी होकर रह जाएगी। बहुत अच्छा कर रही है। ..... समाज में दो-चार ऐसी

स्त्रियाँ बनी रहें, तो अच्छा, पुरुषों के कान तो गर्म करती रहें। ' (वही, पृष्ठ 161)

दरअसल प्रेमचंद के मन में प्रेम, विवाह, नारी-स्वतंत्रता, परिवार, समाज आदि को लेकर कई तरह के सवाल उठ रहे थे। एक चिंतक के रूप में वे किसी निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पा रहे थे। इसलिए जब भी शहरी बुद्धिजीवी पात्र इकट्ठा होते तो वह यह सवाल उठा देते थे कि विवाह करना चाहए या नहीं। शिकार-पार्टी में कहा जाता है कि विवाह बंधन है और 'नयी थ्योरी है मुक्त भोग। ' बुद्धिजीवी मेहता से पूछा जाता है कि आप किसे श्रेष्ठ मानते हैं? 'समाज की दृष्टि से विवाहित जीवन को, व्यक्ति की दृष्टि से अविवाहित जीवन को। ' (वही, पृष्ठ 53) यह कहकर मेहता टाल जाते हैं। वैसे भी मेहता नारी-स्वतंत्रता को पश्चिम का आदर्श मानते हैं। 'जिसे तुम प्रेम कहती हो, वह धोखा है, उद्दीप्त लालसा का विकृत रूप, उसी तरह जैसे सन्यास केवल भीख माँगने का संस्कृत रूप है। वह प्रेम अगर वैवाहिक जीवन में कम है, तो मुक्त विलास में बिल्कुल नहीं है। सच्चा आनंद, सच्ची शांति केवल सेवा-व्रत में है। ' (वही, पृष्ठ 1328) इसी तरह मेहता प्रेम के बारे में कहते हैं - 'प्रेम जब आत्मसमर्पण का रूप लेता है, तभी ब्याह है, उसके पहले ऐयाशी है। ' (वही, पृष्ठ 124)

## 3.6 जातिव्यवस्था और दलित नारी का उत्पीड़न

राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान ही देश के विभिन्न क्षेत्रों मे सामाजिक सुधार आंदोलन भी जोरों पर था। परंपरागत रूढ़िरीति, परंपराओं, अंधविश्वास, जातिवाद और स्त्री-पुरुष असमानता को नष्ट करके एक नए समतावादी समाज की स्थापना का कुछ समाज सुधारक स्वप्न देख रहे थे। जिनमें प्रमुख थे महात्मा ज्योतिबा फुले, आगरकर, न्या. रानडे, सावित्रीबाई फुले, ऐनी बेझंट, स्त्री-पुरुष समानता, शिक्षा का अधिकार और जाति के आधार पर समानता को स्थापित करने के लिए महात्मा ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले ने पुणे में 'सत्यशोधक समाज ' की स्थापना की। इसी के कार्यक्रमों के तहत् लड़कियों के लिए और दलितों के लिए पहली पाठशालाएँ खोली गई। दलितों के अधिकारों को स्थापित करने हेतु अपने घर का कुआँ दलितों के लिए खोल दिया। इस क्रांतिकारी घटना का प्रभाव ग्रहण करके महाराष्ट्र, गुजरात में समाज-सुधार आंदोलन ने गति पकड़ी थी। इसी समय में महात्मा गांधी द्वारा अछुतोद्धार और अस्पृश्यता निवारण का आंदोलन उत्तर भारत में चल रहा था। गांधी जी का मानना था कि वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था को खत्म किए बिना ही अछुतोद्धार का कार्य किया जाए। गांधीजी चूंकि वर्णव्यवस्था और उससे निश्चित हुई जातिव्यवस्था के दृढ़ समर्थक थे और भारत के विकास के लिए इसे अनिवार्य मानते रहे हैं। उनके अनुसार उच्चजातीय समुदायों के सोच में जब तक परिवर्तन नहीं होगा, अछुतोध्दार यहाँ संभव नहीं है। अछुतों की स्थिति को बदलने हेतु जिन अछुतोध्दार कार्यक्रमों को गांधीजी द्वारा चलाया गया व देशभर में इसके प्रति आस्था दिखाई गई थी, वास्तव में ये कार्यक्रम केवल तथाकथित उच्च जातीय समुदायों के मन परिवर्तन हेतु चलाए जा रहे थे। इसमें संघर्ष करने अथवा परिवर्तन लाने के प्रति प्रतिबद्धता का कोई अंश नहीं था। बल्कि कांग्रेस व उनके अनुयायियों के इस कार्यक्रम को रोमानी अधिक बनाया। अतः अछूत-समस्या को खत्म करके, समानता के आधार पर नई समाज रचना का कोई कारगर प्रयास हुआ नहीं। नतीजतन आज भी जातिव्यवस्था का वही कट्टर स्वरूप स्वतंत्रता के बावन वर्षों के बाद भी दिखाई देता है। दलित, आदिवासी व पिछड़ों के सामुहिक नरसंहार जैसी घटनाएं आज भी हो रही है। मानसिक परिवर्तन के साथ-साथ यदि सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन के कार्यक्रमों गांधीजी द्वारा सोचकर लागू किया जाता तो, शायद कुछ परिवर्तन के चिह्न समाज में दृष्टिगत होते।

उच्चवर्णीय, उच्चजातीय समाज के मन परिवर्तन से यह संभव होगा। परिवर्तन या चेतना के जगाने के यह प्रयास नहीं थे। क्रांतिकारी कदम उठाने का इसमें कोई प्रयास नहीं था। अतः परिणाम यह हुआ कि हरीजन कहे जाने वाला समुदाय भी अपने काम को और अस्तित्व को स्वर्ण समाज द्वारा स्वीकार किए जाने की अनंत समय तक बाट जोहता रह गया। प्रेमचंद के गोदान पर इसी विचारधारा का प्रभाव हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उनका कोई भी दलित पात्र अपनी सामाजिक स्थिति के लिए जिम्मेदार धर्म, वर्णव्यवस्था, जातिव्यवस्था और स्वर्ण समाज को कोई प्रश्न नहीं करता। जिस स्थिति में वे जी रहे है, उसे अपने पूर्व जन्म के कर्मफल के रूप में स्वीकार करके चुपचाप अत्याचार और अन्याय को झेलते चले जाते हैं। महाराष्ट्र में डॉ0 आंबेडकर के नेतृत्व में दलित समाज की अस्मिता और अस्तित्व की स्थापना के लिए चल रहे दलित मुक्ति आंदोलन का भी प्रेमचंद की रचना पर कोई प्रभाव नहीं दिखाई देता। सिलिया चमारिन का दातादीन के प्रति समर्पण और मूक प्रेम कोई अलौकिक प्रेम नहीं है, विवशता और विवंचना का ही परिणाम है। परंपरागत मानसिकता को वह वहन कर रही है। उसके हिस्से में आया दर्द, अवहेलना, अपमान और अत्याचार को अपने भाग्य का हिस्सा मानती है। कहीं पर भी विद्रोही स्वर सुनाई नहीं देता। मातादीन के खेत में रात दिन काम करने पर भी एक सेर अनाज उठाने का उसे हक नहीं था। केवल दो वक्त की रोटी और साल भर में एक साड़ी देकर, बंधुआ मज़दूर की तरह उससे व्यवहार किया जाता। मातादीन द्वारा सिलिया के साथ यौन-संबंध स्थापित करके भी उसे एक मामूली मज़दूरीन ही मानना, पुरोहितवादी प्रवृत्ति का ही प्रदर्शन है। सिलिया के पुछने पर 'तुम्हारी चीज़ में मेरा कुछ अख्तियार नहीं है? ' तो जाति दर्प से भरे शब्दों में मातादीन का यह उत्तर 'नहीं, तुझे कोई अख्तियार नहीं है। काम करती है, खाती है। जो तू चाहे कि खा भी, लुटा भी, तो यह यहाँ न होगा। अगर तुझे यहाँ न परता पड़ता हो, कहीं और जाकर काम कर। मज़दूरों की कमी नहीं है। सेंत में नहीं लेते, खाना-कपड़ा देते हैं।'

मातादीन सिलिया के यौन-शोषण को, स्वर्णो का अधिकार मानता है। सिलिया इस शोषण को चुपचाप सहते चली जाती है, उसमें विद्रोह की कोई कुलबुलाहट नज़र नहीं आती। अब भी उसके मन में मातादीन के लिए स्नेह ही है। 'उसका धर्म लेकर तुम्हें क्या मिला? अब वह भी मुझे न पूछेगा। लेकिन पूछे न पूछे, रहूँगी तो उसी के साथ। वह मुझे चाहे भूखों रखे, चाहे मार डाले, पर उसका साथ न छोडूँगी। '

अपमानित होकर भी मातादीन का साथ न छोड़ने का दृढ़ निश्चय और बिरादरी, परिवार जनों से दूर होने का कोई गम न होना, सिलिया के भीतर अस्तित्व और अस्मिता के प्रति सचेतनता की कमी को दर्शाता है।

प्रेमचंद शोषण की जातिगत प्रवृत्तियों को बहुत प्रखरता से उभार नहीं सके हैं और गोदान में दलित चेतना का स्वर जिस प्रखरता से उभरना चाहिए था, वह नहीं उभरा है। प्रेमचंद समाजवादी विचारधारा से बहुत प्रभावित थे और तब तक समाजवादी विचारधारा के एजेंडा पर दलितों के सामाजिक उत्पीड़न को खत्म करने का कोई कार्यक्रम तब तक स्वीकार नहीं किया गया था।

## 3.7 प्रेमचंद की दृष्टि में नारीत्व की अवधारणा

दरअसल प्रेमचंद इन पात्रों के द्वारा नारी के असली रूप को उद्घाटित करना चाहते हैं। उनकी सहानुभूति नारी के मातृत्व रूप के साथ है, वे उसी को महत्व देते हैं तथा रमणी रूप की उपेक्षा करते हैं। परंतु इस उलझन में वे फँस जाते हैं। क्या दोनों रूप एक दूसरे

के विरोधी हैं? क्या रमणी में माता का रूप नहीं होता? क्या माता बिना रमणी का रूप धारण किए माता बन सकती है? क्या सफल रमणीत्व के विना आदर्श मातृत्व की कल्पना की जा सकती है? प्रेमचंद के नारी विषयक विचारों की जानकारी से ऐसे अनेक सवाल उठते हैं, जिनका उत्तर उनके साहित्य में नहीं मिलता। दरअसल पाश्चात्य सभ्यता का भारतीय समाज पर जो प्रभाव पड़ रहा है उसे प्रेमचंद का किसान 'संदेह मिश्रित सराहना ' के भाव से देखता है। वे समाज में मालती के आगमन को चिंतित आँखों से देखते हैं, कुछ-कुछ अनिश्चय-अनिर्णय उनके मन में बना रहता है।

दरअसल प्रेमचंद को गृहस्थ-जीवन की जानकारी बहुत यथार्थ परक है। उन्होंने 'गोदान ' में गृहस्थ नारियों के मनोभाव, चरित्र, प्रकृति, स्वभाव को मूर्त एवं सजीव रूप में उपस्थित किया है। इसलिए धनिया, झुनिया, पुनिया, यहाँ तक कि नोहरी का वर्णन जितना यथार्थवादी है, उतना ही वे युवतियों के वर्णन में कच्चे दिखायी देते हैं। विवाह पूर्व के प्रेम-प्रकरणों, आकर्षण-विकर्षण की स्थितियों के वर्णन में वे निहायत सामान्य मनोवैज्ञानिक जानकारियों से काम चलाते हैं। गोबर-झुनिया का प्रेम-प्रसंग निहायत बेसुरा और हास्यास्पद स्तर तक अयथार्थवादी है। ये प्रसंग सुने-सुनाए या दूर-दूर से देखे या कल्पित होने के कारण रचनात्मक उष्मा से परिपूर्ण नहीं हैं। लेखक इन प्रकरणों को जल्दी-जल्दी निपटाकर पीछा छुड़ाना चाहता है। आगे गंभीर मसला है, उसपर बात करनी है, ऐसी शक्ल बनाकर इन प्रकरणों को चलताऊ रंग में रंग दिया गया है। हाँ, घर बसाने के बाद वह 'युवती ' कैसे रहती है। उसका बनना - सँवरना या बिगड़ना सब उनकी पकड़ में हैं। सोना, रूपा या नोहरी का यथार्थवादी वर्णन वे कर जाते हैं।

प्रेमचंद स्वस्थ, टिकाऊ, गार्हस्थ प्रेम का समर्थन करते हैं तथा आकर्षण या प्रदर्शन, प्रिय प्रेम का विरोध करते हैं। उन्होंने दो प्रकार के प्रेम की परिकल्पना की और दोनों में विरोध खड़ा किया। एक प्रेम आकर्षण से उत्पन्न होता है, जिसके मूल में स्वार्थसिद्धि का भाव रहता है। यह अस्थायी होता है और जल्दी ही नष्ट हो जाता है। सच्चा प्रेम सेवा से उत्पन्न होता है जिसमें आत्मबलिदान का भाव रहता है। यह अंततः श्रद्धा में परिणत हो जाता है, स्थायी रहता है। प्रेमचंद इस साहचर्य जन्य प्रेम को नारी-जीवन का आदर्श मानते हैं, जो होरी धनिया में है। मेहता-मालती का संबंध प्रेमचंद की समझ में नहीं आता। इसलिए वे उनके संबंधों को अधूरा व अनिर्णीत छोड़कर उपन्यास को समाप्त कर देते हैं।

## 3.8 सारांश

'गोदान ' में गाँव की समाजार्थिक व्यवस्था की घुरी के तौर पर किसान की पहचान केंद्रीय स्थिति के रूप में सामने आई है। यहाँ होरी को केंद्रीय पात्र के रूप में प्रेमचंद ने चित्रित किया है। होरी की हार एक व्यक्ति की ही हार नहीं है, बल्कि ग्रामीण संस्कृति और सामंती संस्कृति की हार है। महाजनी सभ्यता के सामने होरी जैसे किसान बेबस और ज़मींदार लाचार है। ज़मींदारों के लिए तो उनके उच्चस्तरीय संबंधों के कारण कुछ राहत तो है लेकिन गरीब किसानों के लिए उनकी जमीन का छीन लिया जाना लगभग मृत्यु के समान है। होरी अपनी पाँच बीघे मौरूसी जमीन उसके लाख प्रयत्नों के बावजूद बचा नहीं पाता। बार-बार लिएं गए कर्ज के बदले, लगान चुकाने के ऐवज में धीरे-धीरे उसकी जमीन महाजन और ज़मींदारों की भेट हो जाती है। होरी के इस जीवन संघर्ष में उसकी पत्नी धनिया का बराबर का साथ है। प्रेमचंद होरी का चरित्र दब्बू, ढीला-ढाला, धर्मभीरू दिखाते है तो धनिया को निडर, स्वाभिमानी, मेहनती और साहसी चित्रित करते हैं। आधुनिक विचारधाराके प्रवर्तक प्रेमचंद होरी के संघर्ष को अकेले के संघर्ष के रूप में नहीं बल्कि होरी-धनिया के सांझा संघर्ष के रूप में दिखाते हैं। गोदान में नोहरी, झुनिया,

सिलिया, चुहिया, मालती और गोविन्दी जैसे नारी पात्र, अस्तित्व के लिए सतत् संघर्षरत है। सिलिया, झुनिया निम्न जाति होने के कारण, तीहरे उत्पीड़न और शोषण को झेल रही है। होरी-धनिया की बिरादरी को यह मंजूर नहीं है कि गोबर बिना ब्याह किए उससे छोटी जाती की झुनिया को घर में रख ले। नतीजतन् होरी पर जुर्माना और डांड लगाया गया है न देने पर बिरादरी से सामाजिक बहिष्कार का पंचों द्वारा अमानवीय निर्णय लिया गया। सामाजिक बहिष्कार का भय दिखाकर जाति पंचायतों द्वारा बार-बार जाति के टूटने की प्रगतिशील प्रक्रिया को रोकने के प्रयास हो रहे है। प्रेमचंद चूँकि प्रगतिशील विचारधारा के प्रवर्तक थे, वे इन समस्याओं को कथाओं माध्यम से उजागर करते है। बिरादरी द्वारा दिए गए आदेश को धनिया ठुकरा देती है और झुनिया को घर से बाहरन नहीं करती। उसका और होरी का यह सांझा निर्णय था। परिणाम स्वरूप होरी को अपने परिवार के लिए संग्रहीत अनाज को डांड के रूप में पंचों के घर पहुँचाना पड़ता है। लेकिन होरी-धनिया अपने निर्णय पर अटल रहते हैं। धनिया की झुनिया के प्रति मानवीय संवेदनशीलता प्रकट रूप में हम देखते हैं। अछूत होने के अभिशाप को झेलती सिलिया शारीरिक शोषण की शिकार है। मातादीन जो अपने को ब्राह्मण मानता है, सिलिया को बहला-फुसलाकर अपने घर में रख लेता है। उससे मेहनत-मजदूरी भी करवाता है। मातादीन के खेत खलिहानों में खटती सिलिया यह नहीं समझ पाती कि उसके शरीर को भोग रहा मातादीन समझता है कि चलो एक मुफ्त की मजदूर भी मिल गई है। वह यही सोचकर खुश है कि मातादीन जैसे ब्राह्मण ने अपने जनेऊ को हाथ में लेकर उसके साथ ब्याह करने की कसम खाई है। मातादीन जैसे द्विज की चालाकी को वह जान नहीं पाती। लेकिन जैसे ही अपना अधिकार समझकर सिलिया अनाज की ढेरी से एक सेर अनाज उठाती है, तो मातादीन अपना असली रूप प्रकट करता है। सिलिया मातादीन के ही बच्चे की माँ बनने वाली थी, ऐसे समय मातादीन उसे अपमानित करके घर से निकाल देता है।

दलित उत्पीड़न से जुड़े आर्थिक अधिकारों और मानवाधिकारों के हो रहे हनन को हम बहुत स्पष्ट रूप से देखते हैं। सिलिया केवल अनपढ़ ही नहीं वह परंपराओं में विश्वास भी करती है। कर्मफल व जन्म सिद्धांत को मानती है। एक ब्राह्मण विप्र द्वारा चमार सिलिया को अपनाने, अपने घर में रखने से ही वह अभिभूत हो जाती है। निम्न जाति के कारण हो रहे यौन-शोषण, आर्थिक शोषण व मानव-अधिकारों के हनन को तो वह समझ नहीं पाती। अपने किए गए अपमान को चुपचाप पी जाती है। संघर्ष या विरोध का कोई स्वर नहीं उठता। सिलिया उसी दलित समुदाय का हिस्सा है जिनमें अभी अस्तित्वबोध जागा नहीं है। वे कभी यह सवाल नहीं करते कि उन्हें जातिव्यवस्था में निम्न क्यों माना जाता है? क्यों उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है? उनके द्वारा किए जा रहे काम/धंधे क्यों घृणित माने गए? वे अस्पृश्य कैसे? सवर्ण कहे जाने वाली जातियाँ इनसे घृणाव द्वेष क्यों करती है? उनकी स्त्रियों का यौन शौषण करने का अधिकार क्यों मानती हैं? समाज बिरादरी इसका विरोध क्यों नहीं करती?

प्रेमचंद एक अछूत कन्या की विवशता, उसके उत्पीड़न व अपमान को एक प्रसंग के माध्यम से चित्रित करके पाठकों के समक्ष सवाल खड़े करते है। उनकी संवेदनाओं को जागृत करते है। गाँव और शहर के बीच विकसित होती गई गोदान की कथा में कुछ शहरी नारी-पात्र भी अपनी उपस्थिति दर्शाते है। जिनके माध्यम से प्रेमचंद ने गाँव और शहर की संस्कृति व परिवेश के अंतर को दर्शाया है। मालती शहर की, उच्च शिक्षा प्राप्त, आधुनिक नारी है। पाश्चात्य संस्कृति का उसके विचारों और व्यक्तिमत्व पर प्रभाव है। मेहता व खन्ना के साथ उसकी मित्रता है। पार्टियों में जाना व पुरुषों के साथ हास-परिहास उसके आधुनिक जीवन का और आसपास के परिवेश का वह हिस्सा है।

इसलिए मेहता व खन्ना के साथ उसकी मित्रता को देखकर कई लोगों के मन में इस प्रेम के बारे में शक उत्पन्न होते देखते है। प्रेमचंद नारी समानता, नारी-स्वतंत्रता से कुछ-कुछ सहमत दिखाई देते है। लेकिन मेहता के माध्यम से उच्छृंखलता का विरोध भी दर्शाते है। मालती के ही चरित्र में दो प्रकार के नारी व्यक्तित्व को देखने की कोशिश की है। हाँलाकि प्रेमचंद का नारी के प्रति दृष्टिकोण प्रगतिशील ही है, फिर भी उच्च शिक्षा प्राप्त, आधुनिक मालती में भी वे समर्पण, त्याग जैसे गुणों की तलाश करते हैं। उसे पुरुष से श्रेष्ठतर बताते हैं किंतु उसे बराबरी का दर्जा नहीं देते। गोदान के मेहता-मालती-गोविन्दी-खन्ना प्रसंग के समावेश का लक्ष्य तो लेखक द्वारा नारी संबंधी अपने इसी आदर्श की प्रतिष्ठा करना ही लगता है। मालती विवाह संस्था के स्वामित्व के प्रति साशंक है। वह मानती है कि व्यक्ति स्वतंत्रता पर विवाह संस्था के हावी होते ही नारी की स्वतंत्रता खतरे में पड़ती है। इसलिए वह विवाह के बिना ही स्त्री-पुरुष संबंधों के पक्ष में है। खन्ना की पत्नी गोविन्दी को इसकी पक्षधरता करते हुए देखा जा सकता है। परंपरावादियों द्वारा व्यक्ति स्वतंत्रता व समानता के मूल्यों के हनन के कारण सिलिया को उत्पीड़न व शोषण का शिकार होना पड़ा है। इन्हीं मानवीय मूल्यों के हासिल होने पर आधुनिक नारी के व्यक्तिमत्व को विकसित होने का मौका मिलता है। वह जीवन में हर प्रकार के निर्णय खुद कर सकती है। लेकिन इस स्वतंत्रता व समानता को हासिल करने की उम्मीद करने वाले समुदाय लगता है विश्व के दो ध्रुवों पर बसे हुए हैं। प्रेमचंद एक ही देश में दो विपरीत स्थितियों के बीच के अंतराल को स्पष्ट करने में सफल हुए है। गाँव तथा शहर की स्थितियाँ व सोच में जो अंतर दिखाई देता है वह अनायास नहीं है। शिक्षा का प्रसार, आर्थिक विकास, आधुनिकीकरण व अवसरों की प्राप्ति केवल शहरों तक सीमित रही है। गाँवों तक इन सुविधाओं को पहुँचाने में न तो उस समय की अंग्रेज सरकार उत्सुक थी और न ही ज़मींदार, महाजन व अधिकारीगण। क्योंकि गाँवों के विकास के साथ ही चेतना का विकास होगा और शोषित दबे हुए किसान, मजदूर, दलित, आदिवासी अपने अधिकार व स्वतंत्रता की माँग करेंगे। यह अंग्रेज सरकार और उसके पक्षधरों को मंजूर नहीं था। एक तरफ उच्च शिक्षा विभूषित मालती कौंसिल का इलेक्शन लड़ती है, तो धनिया, झुनिया, सिलिया को राष्ट्रीय आंदोलन की भनक तक नहीं। प्रेमचंद ने गाँव व शहर के दो अलग-अलग परिवेशों की वास्तविकता को गोदान की रचना द्वारा अभिव्यक्ति देने में बहुत हद तक सफलता प्राप्त की है। प्रेमचंद नारी चरित्रों के माध्यम से इस अंतर को अधिक स्पष्ट कर सके है। गोदान के द्वारा उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक सरोकारों को एक विस्तृत पटल पर रेखांकित किया है।

## 3.9 प्रश्न/अभ्यास

1) सिलिया की कथा को विश्लेषित कीजिए।

2) गोविंदी व मालती के चरित्र की तुलना कीजिए।

3) मालती के प्रति लेखकीय दृष्टिकोण में हुए परिवर्तनों की व्याख्या कीजिए।

4) क्या धनिया मात्र होरी की पूरक पात्र है? उसका कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं है?

5) गोदान में वर्णित प्रेम-प्रकरणों की विश्वसनीयता पर प्रकाश डालते हुए नारी की विशेष स्थिति को स्पष्ट कीजिए।

6) सवर्ण पुरुषों द्वारा दलित स्त्रियों के यौन उत्पीड़न के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक कारणों की चर्चा कीजिए।

## इस खंड के लिए उपयोगी पुस्तकें


| | | |
|---|---|---|
| 1) | प्रेमचंद और उनका युग | डॉ.रामविलास शर्मा |
| 2) | कलम का सिपाही | अमृतराय |
| 3) | प्रेमचंद घर में | शिवरानी देवी |
| 4) | कलम का मजदूर प्रेमचंद | मदनगोपाल |
| 5) | प्रेमचंद और उनका युग | डॉ. रामविलास शर्मा |
| 6) | साहित्य का उद्देश्य | प्रेमचंद |
| 7) | हिंदी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा | रामदरश मिश्र |